नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

मासिक समाचार पत्र • वर्ष 2 • अंक 2-3
मार्च-अप्रैल 2000 (संयुक्तांक) • तीन रुपये • बारह पृष्ठ

नये श्रम कानून लागू होने की घड़ी करीब आ पहुंची

पूंजीपति वर्ग ने अपना आखिरी विकल्प चुन लिया है!

मेहनतकशों को भी अब आखिरी विकल्प चुनना ही होगा!!

• मुकुल श्रीवास्तव

लगभग एक वर्ष पहले 'बिगुल' ने अपने एक अग्रलेख (''मजदूरों के बचे-खुचे अधिकारों पर कुल्हाड़ा गिराने की तैयारी/अब नये श्रम कानूनों की बारी'' – अप्रैल 1999) में जिस खतरे से अपने पाठकों को आगाह किया था, अब वह घड़ी बिल्कुल करीब आ पहुंची है। मजदूरों को पूरी तरह मालिकों की मर्जी का गलाम बना देने वाले नये श्रम कानूनों का कुल्हाड़ा अब सिर पर गिरने ही वाला है। केन्द्रीय श्रम मंत्रालय अपनी सिफारिशें कैबिनेट को पिछले दिसम्बर महीने में ही भेज चुकी है। कैबिनेट की मंजूरी अब सिर्फ समय की बात है। फिर इसके बाद संसद का ठप्पा लगाने में कोई अड़चन नहीं आयेगी क्योंकि इस मुद्दे पर प्रमुख विपक्षी दल कांग्रेस पूरी तरह सरकार के साथ है। इस मुद्दे पर भी हमेशा की तरह संसद में बैठे वामपंथी बहसबाज अपनी लाज बचाने के लिए थोड़ा हो-हल्ला मचाएंगे और फिर सदन से बहिर्गमन कर बदस्तूर अपना कर्तव्य निभा जायेंगे।

आर्थिक ''सुधारों'' की दूसरी पीढ़ी में वाजपेयी सरकार ने देशी-विदेशी पूंजीपतियों की वफादारी में कुत्तों से भी तेज रफ्तार से दुम हिलाते हुए एक से बढ़कर एक मजदूर विरोधी, जनविरोधी कानूनों की झड़ी लगा दी है। पेटेण्ट कानूनों में बदलाव, बीमा एवं बैंकों के निजीकरण का रास्ता साफ करने के बाद अब श्रम कानूनों को देशी पूंजीपतियों और विदेशी कम्पनियों की मर्जी के अनुसार बदलना उनकी प्राथमिकता सूची में सबसे ऊपर आ गया है।

विगत दिसम्बर महीने में श्रम मंत्रालय ने केन्द्रीय कैबिनेट को जो सिफारिशें भेजी हैं, उनमें सबसे खतरनाक है औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 के अध्याय पांच-बी को पूरी तरह हटा लेने की सिफारिश। अब तक चले आ रहे इस श्रम कानून से पूंजीपतियों के हाथ एक हद तक बंधे हुए थे क्योंकि मजदूरों को इससे एक हद तक रोजगार सुरक्षा की गारण्टी मिली हुई थी। लेकिन इसको पूरी तरह हटा लेने के बाद अब कारखाना मालिक अमेरिकी मुहावरे 'हायर एण्ड फायर' (जब चाहो काम पर रखो, जब चाहो निकाल बाहर करो) की तर्ज पर हमारे देश में भी मजदूरों को अपनी मर्जी का गुलाम बना लेंगे।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25 की उपधारा एम के अनुसार किसी भी कम्पनी या उद्योग में (जहां सौ से ज्यादा लोग काम करते हों) सरकार की मंजूरी के बगैर ले ऑफ नहीं हो सकता। इसी तरह धारा 25-एन के तहत किसी भी ऐसे कर्मचारी की छंटनी से पहले जिसे काम करते एक साल पूरा हो चुका हो, तीन महीने की नोटिस देना या फिर सरकार की मंजूरी लेना अनिवार्य है। धारा 25-ओ में किसी कम्पनी अथवा उद्योग को बन्द करने से पहले सरकार की इजाजत की अनिवार्यता का प्रावधान है। बन्दी से 90 दिन पहले कम्पनी को इसके लिए आवेदन करना पड़ता है। इस आवेदन की प्रतियां कर्मचारियों को भी देना जरूरी है।

जाहिर है कि अध्याय पांच-बी को पूरी तरह हटा लेने के बाद अब इसकी विभिन्न धाराओं के तहत मजदूरों को प्राप्त रोजगार सुरक्षा का रहा-सहा कानूनी हथियार पूरी तरह छिन जायेगा। अब कारखानों के मालिक अपनी मुनाफाखोरी के सुभीते के अनुसार मजदूरों को 'हायर' करेंगे (काम पर रखेंगे) और जरूरत

(पृष्ठ 11 पर जारी)

नयी आयात-निर्यात नीति

उदारीकरण-निजीकरण कुचक्र का नया विनाशकारी पड़ाव

(संपादकीय डेस्क)

लखनऊ। वाजपेयी सरकार ने देशी बड़े पूंजीपतियों और विदेशी निवेशकों को खुश करते हुए बहुप्रतीक्षित आयात-निर्यात की नयी नीति की घोषणा कर दी है। इस तरह विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) से किया गया वायदा भी उसने निभा दिया है। इसके साथ ही उसने उदारीकरण-निजीकरण की विनाश-यात्रा में एक नया मील का पत्थर गाड़ दिया है।

- अब देश में आटा, चावल, नमक, मसालों, अचार, चटनी आदि रोजमर्रा के उपयोग की चीजों का आयात होगा।
- लघु उद्योगों को मौत का परवाना।
- लाखों श्रमिकों की रोटी का निवाला छिना।
- विशेष आर्थिक क्षेत्रों में मजदूर मुनाफाखोर भेड़ियों का निवाला बनेंगे।

पिछले 31 मार्च को केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री मुरासोली मारन ने नयी आयात-निर्यात नीति की घोषणा करते हुए 714 वस्तुओं पर से हर प्रकार के आयात प्रतिबन्ध हटाकर पहले से ही तबाह लघु उद्योगों के लिए मौत का परवाना जारी कर दिया है। साथ ही, चीन की तर्ज पर निर्यात को प्रोत्साहित करने के नाम देशभर में ''विशेष आर्थिक क्षेत्र'' बनाने की घोषणा भी की गयी है। इन विशेष आर्थिक क्षेत्रों में सौ फीसदी विदेशी निवेश की छूट होगी। हर तरह के आयात-निर्यात की खुली छूट होगी। यहां किसी भी तरह का श्रम कानून नहीं लागू होगा। पूंजीपति जैसे चाहें वैसे मजदूरों के खून की आखिरी बूंद तक निचोड़कर मुनाफा कमाने के लिए आजाद होंगे।

सरकार ने विश्व व्यापार संगठन के समझौते में देश के बड़े पूंजीपतियों की रजामन्दी से यह वायदा किया था कि वह कुल 1429 वस्तुओं के आयात पर लगे मात्रात्मक प्रतिबन्धों को अप्रैल 2001 तक पूरी तरह हटा लेगी। इसी वायदे को निभाते हुए उसने पहली किश्त में 714 वस्तुओं पर आयात प्रतिबन्ध हटा लिये हैं। शेष 715 वस्तुओं को भी अगले साल अप्रैल तक प्रतिबन्ध मुक्त कर दिया जायेगा।

इन प्रतिबन्धों के हट जाने के बाद उद्योगों के लिए मनचाही मशीनें और कच्चे माल विदेशों से मंगाने के लिए सरकार से कोई इजाजत नहीं लेनी पड़ेगी। सरकार यह दावा कर रही है कि विदेशों से उन्नत मशीनें और उनके उपयोग में आने वाले कच्चे मालों के खुले आयात से लघु उद्योगों को फायदा होगा क्योंकि इससे उनके उत्पादन का स्तर ऊंचा उठेगा और वे विश्व बाजार में होड़ कर सकेंगे। यह सब्जबाग सिर्फ

(पेज 2 पर जारी)

भीतर के पृष्ठों पर

लुटेरों के सरगना क्लिण्टन की भारत-यात्रा 12
आम बजट 2000 : आर्थिक "सुधारों" के दूसरे दौर की एक और कड़वी खुराक 3
टेल्को में तालाबन्दी 3
नेस्ले बिस्कुट फैक्ट्री के मजदूरों का संघर्ष 12
चीनी क्रान्ति की सचित्र था : (भाग तीन) 6
मक्सिम गोर्की की प्रसिद्ध कहानी 'कामो' 9
शहादत दिवस (23 मार्च) पर भगतसिंह की जेल नोटबुक का एक पन्ना 4

नोएडा लेदर गारमेण्ट उद्योग के मजदूरों का संघर्ष
व्यापक मजदूर एकता की शानदार मिसाल

(बिगुल टीम, दिल्ली)

नोएडा। लेदर गारमेण्ट उद्योग की विभिन्न इकाइयों में कार्यरत सभी मजदूरों ने मालिकों द्वारा ढाये जा रहे जुल्म के खिलाफ एकजुट होकर संघर्ष करने का निर्णय लेकर व्यापक मजदूर एकता की एक शानदार मिसाल कायम की है। विगत तीन माह से मालिकों द्वारा श्रमिकों के निकाले जाने एवं श्रम कानूनों के खुल्लमखुल्ला उल्लंघन के खिलाफ अलग-अलग संघर्ष कर रहे मजदूरों ने लेदर गारमेण्ट्स उद्योगों से जुड़े सभी मजदूरों को लेकर एक ''लेदर गारमेण्ट्स श्रमिक संघर्ष संघ'' का गठन कर संघर्ष को आगे बढ़ाने का फैसला किया है।

तीन माह पहले अलग-अलग फैक्टरियों में श्रमिकों के निकाले जाने के खिलाफ संघर्ष की शुरुआत हुई थी।

ऐसी पहलकदमियों को आगे बढ़ाने की जरूरत है

इनमें मुख्य रूप से 'कैप्सन लिमिटेड', सी-25, सेक्टर-59, नोएडा से 35 श्रमिकों, 'हैण्डीक्राफ्ट प्रा.लि.', सी-32, सेक्टर-8, नोएडा से 60 श्रमिकों, 'आनिक्स ओवरसीज (सोनी लेदर)', ई-74, सेक्टर-7, नोएडा से 37 श्रमिकों, 'तेगिया इण्टरप्राइजेज', सी-373, सेक्टर-10, नोएडा से 10 श्रमिकों तथा 'तेगी इण्टरप्राइजेज' यूनिट-3, बी-42 सेक्टर-58 नोएडा से 3 स्थायी श्रमिकों को बिना कारण बताए एवं बिना पूर्वसूचना के निकाल बाहर कर दिया गया था। श्रमिकों ने मालिकों की इस अन्धेरगर्दी की लिखित शिकायत सम्बन्धित श्रम विभाग में की। लेकिन श्रम विभाग एवं प्रशासन के कान पर जूं तक नहीं रेंगा। मात्र खानापूरी के लिए जिलाधिकारी, गौतमबुद्धनगर के आदेशानुसार उप श्रमायुक्त, गौतमबुद्धनगर ने श्रम प्रवर्तन अधिकारी को जांच के लिए भेजा जो केवल कारखाना मालिकों से पूछताछ कर एवं 'सन्तुष्ट' होकर वापस लौट गये। उन्होंने मजदूरों से पूछताछ करने की जरूरत तक नहीं समझी। ऐसे में कोई कार्रवाई न तो होनी थी और न हुई। इसके बाद मजदूरों ने पूरे नोएडा के लेदर गारमेण्ट उद्योग के

(पेज 5 पर जारी)

नयी आयात-निर्यात नीति...

(पृष्ठ 1 का शेष)

छलावा है। विदेशों से उन्नत मशीनें तो आने से रहीं, अलबत्ता वहां पुरानी पड़ चुकी मशीनों की यहां भरमार हो जायेगी। इनके सहारे होड़ में टिकने की बात करना वैसा ही है जैसे कोई लंगड़ा व्यक्ति पी.टी. उषा से मुकाबला करने का मुगालता पाले।

इन पूंजीगत मालों के अतिरिक्त जिन उपभोक्ता मालों को आयात प्रतिबन्धों से मुक्त किया गया है, उनकी सूची देखने से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि लघु उद्योगों के पूरे सफाये और देशी बड़े पूंजीपतियों एवं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के एकाधिकार का रास्ता साफ कर दिया गया है। नयी नीति की 714 वस्तुओं की सूची में साठ आइटम ऐसे हैं जो अब तक लघु उद्योगों के लिए आरक्षित थे। सूची में 80 वस्तुएं कृषि-उत्पाद हैं और अनेक वस्तुएं रोजमर्रा के इस्तेमाल की हैं। इनमें आटा, चावल, साधारण नमक, दूध, सिगरेट, मिर्च-मसाले, चाय, कॉफी, अचार, फलों के शर्बत, जमी मछली, साइकिल, म्यूजिक सिस्टम, टाइपराइटर, स्टोव-कुकर, गैस सिलिंडर, पान, कत्था, कप-प्लेट, रबर की चप्पलें, जूते, प्याज, सब्जियां आदि सभी शामिल हैं।

जाहिर है, इन चीजों के आयात से बड़े औद्योगिक घरानों की सेहत पर कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है। बाजार की होड़ में टिकने के लिए वे विदेशी कम्पनियों से सौदे कर मुनाफा पीटेंगे या उनके साथ सहयोग या विलय कर लेंगे।

लेकिन, छोटे उद्योग अपना शटर गिराने पर बाध्य हो जायेंगे। उनमें खट रहे लाखों मजदूर सड़कों पर आ जायेंगे। इसके साथ ही, मुनाफे के लिए खेती करने वाले बड़े पूंजीवादी भूस्वामी डिब्बाबन्द-बोतलबन्द खाने-पीने की चीजें बनाने वाली बड़ी देशी-विदेशी कम्पनियों को अपनी उपज बेचकर मालामाल होते रहेंगे। लेकिन जीने के लिए खेती करने वाले छोटे-मंझोले किसानों की तबाही-बर्बादी का एक नया सिलसिला शुरू होगा। इसीसे जुड़ा एक विनाशकारी पहलू यह भी है कि देश में भीषण अनाज-संकट दस्तक दे रहा है। खाद्यान्नों के सस्ते आयात से देशी उत्पादक बाध्य होंगे कि वे मुनाफा देने वाली दूसरी कृषि उपजों को पैदा करें। हाल ही में इस बारे मे कई रिपोर्टें आयी हैं कि पश्चिमी कृषि-उत्पादक भी मुनाफा बटोरने के लिए खाद्यान्नों के बजाय अन्य कृषि-उत्पादों को पैदा करने में अधिक दिलचस्पी ले रहे हैं, जिससे विश्व स्तर पर खाद्यान्नों का उत्पादन लगातार गिरता जा रहा है।

नयी आयात-निर्यात नीति के तहत निर्यात बढ़ाने के नाम पर जिन नये विशेष आर्थिक क्षेत्रों को बनाने की घोषणा की गयी है वहां मजदूरों के शोषण की जो दास्तान लिखी जायेगी वह सत्रहवीं-अठारहवीं सदी में यूरोप में उभर रहे आरम्भिक पूंजीवाद के बर्बर शोषण की दास्तान को मीलों पीछे छोड़ देगी। चीन के "विशेष आर्थिक क्षेत्रों" और भारत में पहले से ही मौजूद "निर्यात प्रसंस्करण क्षेत्रों" की हालत से इसका अनुमान लगाया जा सकता है। इन जगहों पर देश में मौजूद श्रम कानून लागू नहीं होते। न्यूनतम मजदूरी तक से वंचित मजदूर निर्यातकों की निरंकुश मर्जी पर चौदह-चौदह, सोलह-सोलह घण्टे खटते रहते हैं। यूनियन बनाने का अधिकार तक नहीं है। अब यह चीज देश में बड़े पैमाने पर लागू करने की घोषणा की गयी है।

फिलहाल विशेष आर्थिक क्षेत्रों को बनाने की शुरुआत गुजरात और तमिलनाडु में होगी। आगे चलकर अन्य राज्यों में भी ये क्षेत्र विकसित किये जायेंगे। सरकार की योजना पहले से मौजूद सान्ताक्रुज, कांडला, विशाखा-पत्तनम और कोच्चि के निर्यात-प्रसंस्करण क्षेत्रों को विशेष निर्यात क्षेत्रों में बदलने की है।

नयी आयात-निर्यात नीति की इस घोषणा से सरकार ने एक बार फिर यह साबित कर दिया है कि देश की मेहनतकश आबादी को देशी-विदेशी मुनाफाखोर भेड़ियों का निवाला बनाने के लिए सबकुछ करने की तैयारी है।

अब अगर अपना अस्तित्व बचाना है तो देश की मेहनतकश आबादी को भी अपनी तैयारियां नये सिरे से तेज करनी होंगी। अपनी नयी रणनीति बनानी होगी। नये हथियार गढ़ने होंगे। ●

क्लिण्टन की भारत-यात्रा...

(पेज 12 से आगे)

रणनीति के तहत पोखरण विस्फोट के बाद लगे प्रतिबंधों को इस पर दस्तखत करने के साथ जोड़ने पर अड़ा हुआ है।

साम्राज्यवादी विश्व के बड़े और छोटे पार्टनरों की इस खींचतान में देश की मेहनतकश जनता को कुछ नहीं हासिल होने वाला है। उसकी तबाही-बर्बादी का सिलसिला तो तब तक चलता रहेगा, जब तक दुनिया से पूंजीवाद-साम्राज्यवाद के इस लूट-तंत्र को नहीं उखाड़ फेंका जाता। विश्व मानवता के सबसे बड़े अपराधी ने भारत यात्रा के दौरान चिरपरिचित अमेरिकी-पाखण्ड का भी भरपूर प्रदर्शन किया। सूचना-तकनीक की नयी सोने की मुर्गी के व्यापार के जरिए मालामाल होने की अपनी दुष्ट लालसा पर जनहित का पर्दा डालने की कोशिश में उसने ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना-तकनीक के विस्तार के नाम पर 50 लाख डालर के खैरात की घोषणा की। दुनिया की आधी आबादी को कुपोषण और बीमारियों के गर्त में ठेल देने वाली पूंजीवादी-साम्राज्यवादी दुनिया के इस चौधरी ने पोलियो, मलेरिया और एड्स को दूर करने के नाम पर भी 40 लाख डालर की खैरात बांटी। ठीक वैसा ही अश्लील पाखण्ड जैसा उसने इराकी हमले को सम्प्रभुता की रक्षा का नाम दिया था और कोसोवो की तबाही को मानवतावादी मदद की संज्ञा दी थी।

शायद क्लिण्टन महाशय सोचते होंगे कि इन खैरातों को बांटकर वह अपना असली मानवता-विरोधी खूंखार चेहरा छुपा ले जायेंगे और हिन्दुस्तान की जनता उसके काले-कारनामों को भूल जायेगी। अमेरिकी विदेश मंत्री मेडलीन अलब्राइट ने भी 'अतीत की गलतियों' के लिए माफी मांगकर ऐसा ही सोचा होगा।

क्लिण्टन यात्रा के जिस तीसरे मकसद की हमने ऊपर चर्चा की है, उसे संयुक्त विज्ञप्तियों और वक्तव्यों से नहीं, बल्कि इस अहम तथ्य के मद्देनजर काफी असानी से समझा जा सकता है कि क्लिण्टन के वापस जाते ही भारत सरकार ने यहां के अमेरिकी दूतावास में अमेरिका के संघीय जांच ब्यूरो (एफ.बी.आई.) को दफ्तर खोलने की इजाजत दे दी। यूं तो सभी साम्राज्यवादी देशों की जासूसी संस्थाएं अपने-अपने दूतावासों की आड़ में यहां हमेशा सक्रिय रही हैं, पर अमेरिका नेहरूकाल से ही यहां दूतावास में एफ.बी.आई. और सी.आई.ए. के दफ्तर खोलना चाहता रहा है, जिसे देश की तत्कालीन सरकारें नामंजूर करती रही हैं। अब यहां एफ.बी.आई. का दफ्तर खुलना एक महत्वपूर्ण कदम है, जो अन्य बातों के साथ ही भूमण्डलीकरण के दौर के बदलते विश्व-शक्ति संतुलन का भी एक प्रमाण है। एफ.बी.आई. का दफ्तर यहां पहला काम यह करेगा कि अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हितों की रक्षा के लिए जासूसी का काम करेगा। साथ ही, वह देश की राजनीतिक स्थितियों पर भी नजर रखेगा और किसी भी विस्फोटक स्थिति में यहां के शासक वर्ग की मदद करेगा। लातिन अमेरिकी देशों में, जहां इन्हीं आर्थिक नीतियों पर अमल के परिणाम स्वरूप व्यापक जनान्दोलन और क्रांतिकारी संघर्ष विगत डेढ़ दशक से लगातार जारी हैं, वहां की सरकारों को अमेरिकी जासूसी तंत्र और सैन्य सलाहकार लगातार मदद करते रहते रहे हैं। अब भारत में भी भविष्य के किसी जन-विस्फोट से निपटने के लिए देशी शासक वर्ग चाक-चौबन्द हो रहा है और अमेरिकी तथा अन्य साम्राज्यवादी भी। अमेरिकी और भारतीय प्रतिनिधियों द्वारा "आतंकवाद के विरुद्ध मिल-जुलकर संघर्ष करने" के साझा बयान को भी इसी परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए।

देश के लुटेरों की सबसे बड़ी पंचायत भारतीय संसद में बिल क्लिण्टन का स्वागत करते हुए प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपना भाषण यह कहकर खत्म किया था कि वे क्लिण्टन की भारत यात्रा को कभी नहीं भूल पायेंगे। सच है देशी लुटेरों का राजनीति सरगना अपनी वजहों से क्लिण्टन को नहीं भूल पायेगा। लेकिन देश का मेहनतकश अवाम भी मानवता के इस खतरनाक अपराधी को कभी नहीं भूल पायेगा। क्लिण्टन जैसों के अपराधों की सजा आने वाले दिनों में इतिहास खुद सुनायेगा। ●

विजय कुमार आर्य और राजकिशोर को रिहा करो!

पिछले कुछ महीनों से देश के विभिन्न हिस्सों में क्रांतिकारी जनांदोलनों पर बर्बर राजकीय दमन की घटनाएं बेतहाशा बढ़ती जा रही हैं। क्रांतिकारी सामाजिक कार्यकर्ताओं की फर्जी मुठभेड़ों में हत्याएं करने, झूठे मुकदमों में फंसाकर गिरफ्तार करने और हिरासत में अमानुषिक यातनाएं देने की घटनाएं आम हो चुकी हैं।

पिछले 11 फरवरी को बिहार में डुमरांव के नावानगर में पुलिस ने तीन लोगों को गिरफ्तार किया जिनमें से एक उस इलाके के प्रमुख सामाजिक कार्यकर्ता विजय कुमार आर्य भी हैं। उन पर हत्या से लेकर राजद्रोह तक के झूठे मुकदमे थोपे गये हैं। खबर मिल रही है कि हिरासत में उन्हें गंभीर शारीरिक यातनाएं भी दी गई हैं। इसके साथ ही *अखिल भारतीय क्रांतिकारी सांस्कृतिक संघ के संयुक्त सचिव* राजकिशोर को भी झूठे आरोप लगाकर मोतिहारी के बखरी गांव से गिरफ्तार कर लिया गया है।

हम इन गिरफ्तारियों की निंदा करते हैं और मांग करते हैं कि इन दोनों सामाजिक कार्यकर्ताओं को रिहा किया जाए, उन पर लगाये झूठे मुकदमे वापस लिये जाएं और जबतक उन्हें रिहा नहीं किया जाता तबतक उनके साथ राजनीतिक बंदियों जैसा बर्ताव किया जाए। साथ ही हम मांग करते हैं कि विजय कुमार आर्य की हिरासती यातना की जांच कराई जाए एवं दोषियों को सजा दी जाए।

हम सभी जनतंत्रप्रेमी नागरिकों से अपील करते हैं कि वे श्री विजय कुमार आर्य और श्री राजकिशोर की गिरफ्तारी की निंदा करें, अपनी-अपनी जगहों पर इसके खिलाफ व्यापक हस्ताक्षर अभियान चलाएं और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को पत्र, टेलीग्राम, फैक्स भेजकर अपना विरोध दर्ज करें।

हस्ताक्षरकर्ता

सी.बी. सिंह – एडवोकेट, हाईकोर्ट, अध्यक्ष, मानवाधिकार संयुक्त संघर्ष समिति
विश्वनाथ मिश्र–राहुल फाउण्डेशन, कमला पाण्डेय–सम्पादक, अनुराग बाल पत्रिका
मुकुल श्रीवास्तव–संपादक, आह्वान कैम्पस टाइम्स, अरविन्द सिंह–संपादक, दायित्वबोध
चंद्रप्रकाश झा – पत्रकार, यू.एन.आई., कात्यायनी – लेखिका
सत्यम वर्मा – पत्रकार, यूनीवार्ता, राकेश कुमार – दिशा छात्र समुदाय
डा. दूधनाथ – सम्पादक, बिगुल, रामबाबू – चित्रकार
उमेश जोशी – पत्रकार, कुबेर टाइम्स, आदेश सिंह – रेल मजदूर अधिकार मोर्चा
मीनाक्षी – नारी सभा, रवीन्द्र शुक्ला-संपादक 'विकल्प'

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मजदूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मजदूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मजदूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मजदूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनवाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों में क्रान्तिकारी भरती के काम में महत्वपूर्ण बनेगा।

5. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

बिगुल यहां से प्राप्त करें

◆ शहीद पुस्तकालय, जनगण होम्यो सेवा सदन, **मर्यादपुर**, मऊ ◆ मौर्या बुक स्टाल, सआदतपुरा (निकट रोडवेज), मऊनाथभंजन, **मऊ** ◆ जनचेतना, जाफरा बाजार, **गोरखपुर** ◆ विजय इन्फारमेशन सेन्टर, कचहरी बस स्टेशन, **गोरखपुर** ◆ विश्वनाथ मिश्र, नेशनल पी.जी. कालेज, **बड़हलगंज**, गोरखपुर ◆ ओमप्रकाश, 69, बाबा का पुरवा (पुराना), पेपर मिल रोड, निशातगंज, **लखनऊ** ◆ जनचेतना स्टाल, काफी हाउस के पास, हजरतगंज, **लखनऊ**, (शाम 5 से 7) ◆ राहुल फाउण्डेशन, 3/274, विश्वास खण्ड, गोमतीनगर, **लखनऊ** ◆ विमल कुमार, बुक स्टाल, निकट नीलगिरि काम्प्लेक्स, ए ब्लाक, इंदिरानगर, **लखनऊ** ◆ देवेन्द्र प्रताप, द्वारा श्री इन्द्र सिंह रावत, आल्मा काटेज, 7, मल्लीताल, **नैनीताल** ◆ विजय कुमार, 55/3, ई.डब्ल्यू.एस., आवास विकास कालोनी, **रुद्रपुर** (ऊधमसिंहनगर) ◆ रामपाल सिंह, भारतीय जीवन बीमा निगम, आवास विकास, **रुद्रपुर** (ऊधमसिंहनगर) ◆ रवीन्द्र कुमार, भारतीय जीवन बीमा निगम, शाखा कार्यालय, पन्तनगर ◆ कृष्णगोविन्द सिंह, बी-37, बिड़ला छात्रावास, बी.एच.यू. **वाराणसी** ◆ प्रोग्रेसिव बुक सेंटर, विश्वनाथ मंदिर गेट, बी.एच.यू. **वाराणसी** ◆ राजीव वर्मा द्वारा डा. जे.पी. वर्मा, बी.पी. 82, पटेलनगर, **मुगलसराय**, वाराणसी ◆ राजेन्द्र प्रसाद, रेणु मेडिकल की गली, मुख्य सड़क, रेणुकूट, **सोनभद्र** ◆ सत्यम वर्मा, 81, समाचार अपार्टमेंट, मयूर विहार-एक, **नई दिल्ली** ◆ ललित सती, भारतीय जीवन बीमा निगम ◆ डी. के. सचान, कृषि विज्ञान केंद्र, कलक्ट्रेट, **गाजियाबाद** ◆ एस.के.शर्मा, 282 बी, रेलवे कालोनी, **गढ़हरा**, बेगूसराय ◆ सुनील कुमार सिंह, सेक्टर-12 बी, 3159, बोकारो इस्पातनगर, **बोकारो** ◆ गणपतलाल, ग्राम काजी रसूलपुर, पो. तेघड़ा, **बेगूसराय** ◆ पीपुल्स बुक हाउस, पटना कालेज के सामने, **पटना** ◆ समकालीन प्रकाशन (प्रा.) लि. पुस्तक बिक्री केन्द्र, आजाद मार्केट, पीरमुहानी, **पटना** ◆ विकल्प सांस्कृतिक मोर्चा, 22, स्वस्तिक काम्प्लेक्स, नेपियर टाउन, **जबलपुर** ◆ नरभिन्दर सिंह, द्वारा डा. सुखदेव हुन्दल, ग्रा/पो. **सन्तनगर**, जिला-सिरसा ◆ राकेश गोरखा, सरस्वती पुस्तक मंदिर, प्रधान नगर, सिलीगुड़ी, **दार्जीलिंग** ◆ बुक मार्क, 6, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, **कलकत्ता** ◆ शर्मा बुक स्टाल, थाना रोड, चराली, तिनसुकिया

नेपाल ◆ विश्व नेपाली पुस्तक सदन, श्रवनपथ, बुटवल, रुपनदेई, नेपाल

केन्द्रीय आम बजट 2000 : आर्थिक "सुधारों" के दूसरे दौर की एक और कड़वी खुराक

देशभक्ति के नाम पर मेहनतकशों को बलि का बकरा बनाया गया
देशी-विदेशी मुनाफाखोरों को गरमा-गरम गोश्त परोसा गया

• अरविंद सिंह

विगत 29 फरवरी को प्रस्तुत नयी सदी के पहले केन्द्रीय आम बजट में आर्थिक "सुधारों" के दूसरे दौर की जरूरतों को पूरा करने के नाम पर एक बार फिर सरकार ने देश की मेहनतकश जनता के जीने के अधिकारों पर जबर्दस्त डाकाजनी और पाकेटमारी की है। देशी-विदेशी मुनाफाखोरों के मुनाफे पर छाये संकटों को दूर करने के लिए इस बार सरकार ने देश की सुरक्षा की ओट में मेहनतकशों को शिकार बनाया है। गरीबों के मुंह का निवाला छीनकर धनपशुओं के दस्तरखान पर गरमा-गरम लजीज गोश्त परोसा गया है।

प्रधानमंत्री, वित्तमंत्री से लेकर सत्तारूढ़ गठबन्धन के सभी प्रमुख नेता इस बजट में "कठोर कदमों" को उठाये जाने की मजबूरी का रोना काफी पहले से ही रो रहे थे। सुख-सुविधाओं के लिए पूंजीपतियों को अपनी आत्माएं बेच चुके पूंजीवादी अर्थशास्त्री और अखबारी कलमघसीट भी सरकार को नसीहतें देने में पीछे नहीं थे कि यदि अर्थव्यवस्था को संकट से उबारना है तो "राजनीति" का मोह छोड़कर "कड़े कदम" उठाने की इच्छाशक्ति दिखानी होगी। हालांकि, सरकार को इन नसीहतों की कोई खास जरूरत नहीं थी। वह पहले से ही तैयार बैठी थी। सरकार ने वही किया जो उसकी "अपनी जनता" की मर्जी थी — अपनी जनता को, यानी देशी-विदेशी उद्योगपतियों, सटोरियों, समाज के अन्य धनी वर्गों को रियायतें और शहर-देहात के गरीबों, निम्न मध्यम मध्यम वर्ग की बची-खुची सुविधाओं-सहूलियतों को छीनकर नये-नये करों का चाबुक। इस बार नया बहाना गढ़ा गया है—देश की रक्षा-जरूरतों का।

राशन का गेहूं, चावल, चीनी महंगा

इस बार सरकार ने बजट में राशन की दुकानों पर मिलने वाले गेहूं, चावल व चीनी तथा रासायनिक उर्वरकों को दी जाने वाली सब्सिडी (सरकारी सहायता) में भारी कटौती कर दी है। इससे राशन के गेहूं और चावल के दाम में 60-70 फीसदी, यूरिया के दाम में 15 फीसदी तथा पोटाश एवं डाइ अमोनिया फास्फेट (डी.ए.पी.) के दाम में लगभग 7 फीसदी की बढ़ोत्तरी हो गयी है।

राशन की चीनी का दाम भी एक रुपया प्रति किलो बढ़ा दिया गया है। इसके साथ ही सरकार ने गरीबी रेखा से ऊपर रहने वाले उन राशनकार्ड धारकों को, जो आयकर के दायरे में आते हैं, राशन की चीनी की सुविधा से वंचित कर दिया है। इस फैसले से देश की 5 करोड़ आबादी को अब राशन की चीनी नहीं मिलेगी। बजट के इन फैसलों से सरकार ने गरीबों की जेब पर डाका डालकर रु. 500 करोड़ की बचत की है। वित्त मंत्री ने अपने भाषण में इसे बजट घाटा कम करने की मजबूरी बताया।

राशन की दुकानों पर बढ़ी महंगाई (प्रति किलो मूल्यः रुपये में)

	गेहूं		चावल		चीनी	
गरीबी रेखा से नीचे	पुरानी कीमत	नयी कीमत	पुरानी कीमत	नयी कीमत	पुरानी कीमत	नयी कीमत
	2.50	4.20	3.50	5.85	12.00	13.00
गरीबी रेखा से ऊपर	6.82	8.40	9.05	11.70	12.00	13.00

क्या खूब मजबूरी है गरीबों की जेब पर डाका डालने की! सच्चाई यह कि सरकार उद्योगपतियों को उद्योग लगाने के प्रोत्साहन के नाम पर जो तरह-तरह की परोक्ष सब्सिडी देती है, उसे बोझ नहीं मानती। अफसरों-मंत्रियों-सांसदों-विधायकों के लगातार बढ़ते वेतन-भत्तों और सुविधाओं को बोझ नहीं मानती। संसद-विधानसभाओं में बहसबाजी करने के लिए होने वाले बेशुमार खर्चों को, मंत्रियों व "जनप्रतिनिधियों" के सुरक्षा खर्चों को बोझ नहीं मानती। यह तो उनकी जरूरी आवश्यकता है। इसीलिए गरीबों के पेट पर लात मारना उनकी मजबूरी है।

औसत मध्यम वर्ग की जेब पर भी डाका

सरकार की यह मजबूरी और जरूरत इतनी बढ़ गयी है कि इस बार बजट में वह औसत मध्यम वर्ग की जेब पर भी डाका डालने में नहीं चूकी है! सभी सरकारी कर्मचारियों के भविष्यनिधि खातों पर मिलने वाली ब्याज दरों को भी इस बार बजट में 12 प्रतिशत से घटाकर 11 प्रतिशत कर दिया गया है। इससे करोड़ों रुपये की बचत होगी। पिछले बजट में इसकी चर्चा की गयी थी। इस बार लागू कर दिया गया।

इतना ही नहीं, औसत मध्यम वर्ग की एक भारी आबादी को आयकर के जाल में फंसाने के लिए वित्त मंत्री ने छह में से एक योजना (टेलीफोन, मकान, विदेश यात्रा, क्रेडिट कार्ड, चार पहिया वाहन और महंगे क्लब की सदस्यता—इन छह में से एक सुविधा का उपयोग करने वाले को आयकर रिटर्न भरने की अनिवार्यता) लागू की है। पूंजीवादी सरकारें "अपनी जनता" के बढ़ते खर्चों की जरूरतों से जब बेहद मजबूर हो जाती हैं, तभी वे मध्यम वर्ग की जेबों पर हाथ साफ करने का नाजुक विकल्प अख्तियार करती हैं। जाहिर है कि बिचारी सरकार आज इतनी मजबूर हो चुकी है कि वह इस नाजुक विकल्प को अपनाने से इस बार खुद को रोक नहीं सकी।

मेहनतकश जनता की जेबों पर खुला डाका डालते हुए भी पूंजीपतियों के मक्कार मुनीम ने अपने बजट भाषण में अपनी चिरपरिचित लफ्फाजी करते हुए गरीबों की खाद्य सुरक्षा के प्रति चिन्ता प्रकट की और राशन के अनाज की मात्रा 10 किलो से 20 किलो करने की घोषणा की। यह आम जानकारी की बात

(पृष्ठ 4 पर जारी)

मजदूरों को संघर्ष में जीतने के लिए मौकापरस्त नेतृत्व से पीछा छुड़ाना जरूरी है

(बिगुल संवाददाता)

साहिबाबाद, सेक्टर-41 में स्थित नेस्ले ब्रांड के बिस्कुटों का उत्पादन करने वाली फैक्ट्री 'एक्सेलिसिया फूड्स लि. में पिछले छह महीनों से प्रबन्ध तंत्र अमानवीय जोरों-जुल्म के खिलाफ चल रहा मजदूरों का संघर्ष आज भी जारी है। नेतृत्व द्वारा प्रबन्ध तंत्र के सामने बार-बार घुटना टेकने और मजदूरों के साथ विश्वासघात करने के बावजूद संघर्षरत मजदूरों का हौसला पस्त नहीं हुआ है और वे अलग-अलग रूपों में अपना संघर्ष जारी रखे हुए हैं।

ज्ञात हो कि लगभग एक दर्जन से भी अधिक किस्म के बिस्कुटों का उत्पादन करने वाली इस फैक्ट्री में विगत मार्च 1997 से उत्पादन हो रहा है। शुरू में जर्मन उद्योग समूह नेस्ले के साथ भारतीय कंपनी डाबर का भी इसमें एक मामूली शेयर था, किन्तु अब यह पूरी तरह नेस्ले समूह के स्वामित्व में है। उत्पादन शुरू होने के साथ ही यह विदेशी कम्पनी स्थानीय मजदूरों के सस्ते श्रम और कच्चे मालों के दम पर अकूत मुनाफा बटोर रही है।

इस कारखाने में सिर्फ पांच प्रतिशत स्थायी मजदूर काम करते हैं। इन्हें भी सिर्फ लगभग 3500 रुपये प्रतिमाह मजदूरी दी जाती है। शेष 95 प्रतिशत मजदूर या तो अस्थायी हैं या ठेकेदारी प्रथा के तहत काम करते हैं। जिन्हें मात्र 1500 रुपये से 1600 रुपये तक मजदूरी मिलती है। इनके काम के घण्टे भी मनचाहे ढंगसे प्रबन्धक खुद तय करते हैं। इनमें देशी प्रबन्धकों को 40-50 हजार रुपये से एक लाख रुपये तक मासिक तनख्वाह मिलती है, अन्य वी.आई.पी. सुविधाएं अलग से। जबकि विदेशी प्रबन्धकों को तो कई लाख रुपये तनख्वाह और सुविधाओं के रूप में मिलते हैं।

संघर्ष की शुरुआत

मजदूरों से आधुनिक मशीनों पर पाशविक तरीके से बारह घण्टों से भी अधिक काम लेने, चाय पीने, पानी पीने, पेशाब करने जाने तक पर पाबन्दियां लगाने, आपस में बातचीत तक न करने देने और यहां तक कि जब उनसे गाली-गलौज और मारपीट तक करने की घटनाएं होने लगीं, तब मजदूरों के सब्र का बांध टूट गया। उनके बीच से प्रतिशोध के स्वर उठने लगे। लेकिन प्रबन्धक वर्ग अपनी हरकतों से बाज आने के बजाय उन्हें डराने-धमकाने-आतंकित करने और बात-बात पर मारपीट करने पर आमादा हो गया और मजदूरों को बाहर खदेड़ना शुरू किया। मजदूरों ने इस संवाददाता को बताया कि पर्सनल मैनेजर व उसके पी.ए. ने खुद कैण्टीन में मजदूरों के साथ मारपीट की। जुल्म की इन्तहां हो जाने पर पिछले वर्ष सितम्बर 1999 में मजदूरों ने एक तदर्थ नेतृत्वकारी कमेटी का गठन कर अपने आन्दोलन की शुरुआत की।

लेकिन दिसम्बर 1999 तक मजदूरों के आन्दोलन को कोई गति नहीं दी जा सकी। घर जाते समय रास्ते में मजदूरों को गुण्डों से पिटवाने, पुलिस से पिटवाकर हवालात में बन्द करवाने से लेकर तरह-तरह की दमनकारी कार्रवाईयों के द्वारा प्रबन्धक वर्ग आन्दोलन को तोड़वाने की कोशिश करता रहा। लेकिन इससे भी मजदूरों का मनोबल नहीं टूटा। अपने अस्तित्व की लड़ाई बनाकर उन्होंने संघर्ष जारी रखा।

सीटू नेतृत्व की मौकापरस्ती

लेकिन मजदूरों के इस आन्दोलन के सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि उनके बीच कोई सूझ-बूझ वाला क्रान्तिकारी नेतृत्व नहीं है, जो मालिकान के दमन का मुकाबला करते हुए एक दूरगामी व्यावहारिक रणनीति बनाकर संघर्ष को आगे बढ़ाये। इस विकल्पहीनता का लाभ उठाकर सी.आई.टी.यू. (सी.पी.एम. से जुड़ी ट्रेड यूनियन) के लोग नेतृत्व पर काबिज हो गये। इस नेतृत्व ने समझौतावादी ढंग से मालिकान के सामने रिरियाने के अलावा कुछ नहीं किया। नेतृत्व के दिवालियेपन की हालत यह है कि तीन महीने तक संघर्ष खिंचने के बाद भी इसने न तो संघर्ष में आसपास के मजदूरों को खींचने का कोई सचेत प्रयास किया और न ही संघर्षरत मजदूरों के परिवारों को आर्थिक सहायता प्रदान करने की कोई योजना बनायी। जबकि इस औद्योगिक क्षेत्र के बहुतेरे कारखानों में 'सीटू' का प्रभाव है, बल्कि यूं कहा जाये कि यही सबसे प्रभावशाली यूनियन है।

'सीटू' नेतृत्व की समझौतापरस्ती का नमूना उस समय बिल्कुल साफ ढंग से देखने को मिला जब विगत 7 जनवरी, 2000 को कारखाना गेट के सामने एकत्र मजदूरों को गुण्डों द्वारा डराने-धमकाने पर मजदूरों ने गुण्डों को दौड़ा लिया था, जिसके बाद पुलिस ने मजदूरों पर बर्बर लाठीचार्ज किया। लगभग एक दर्जन मजदूरों को गम्भीर चोटें आयीं। उसी दिन एक मजदूर को उसके घर से कुछ गुण्डे मारुति वैन में उठाकर अपहरण कर ले गये। जबर्दस्ती त्यागपत्र लिखने पर उसकी जान बची थी।

इस दिन की घटना से आसपास के कारखानों में काम कर रहे मजदूरों के अन्दर जबर्दस्त आक्रोश उबल उठा। हजारों मजदूरों ने स्वतः स्फूर्त ढंग से एकत्र होकर एक दिन कारखाने के गेट को जाम कर दिया। आन्दोलनरत मजदूरों के अनुसार सभी मजदूरों का इस बात पर दबाव था कि जब तक फैसला नहीं होगा वे वहां से हटेंगे नहीं। पुलिस के बड़े अधिकारी भी वहां पहुंच चुके थे। लेकिन 'सीटू' नेतृत्व ने सिर्फ प्रबन्ध तंत्र द्वारा आश्वासन दिये जाने पर उस दिन आन्दोलन को खत्म करवा दिया। सच कहा जाय तो आज तक मजदूरों का आन्दोलन सिर्फ आश्वासनों की खुराक पर चलता रहा है। लेकिन, नेतृत्व बार-बार विश्वासघात के बावजूद अब भी मजदूरों ने तोहिम्मत नहीं हारी है। कोर्ट द्वारा कारखाना परिसर से 100 मीटर के दायरे में मजदूरों के एकत्र होने पर रोक के बावजूद मजदूर प्रतिदिन गेट के सामने स्थित पार्क में एकत्र होते हैं।

मजदूरों की इस जुझारू संघर्ष क्षमता के बावजूद यह कड़ुवा सच है कि किसी क्रान्तिकारी, दूरदर्शी व्यावहारिक नेतृत्व के अभाव में मजदूरों के इस आन्दोलन का भविष्य भी धीरे-धीरे उसी दिशा में अग्रसर है जैसा हश्र पिछले दिनों में देशी-विदेशी मालिकानों के शोषण-उत्पीड़न के खिलाफ अपने-अपने कारखानों के भीतर सीमित रहने वाले संघर्षों का हुआ है। लेकिन इस संघर्ष ने मजदूरों को काफी कीमती शिक्षाएं दी है। पूंजीवादी न्यायपालिका, शासन- प्रशासन तंत्र की असलियत आज उनके सामने साफ हो चुकी है कि यह समूचा तंत्र मालिकों के पक्ष में खड़ा है। संघर्ष के दौरान प्रबन्धक वर्ग के लोगों के खिलाफ आज तक एक भी रिपोर्ट पुलिस ने नहीं दर्ज की, जबकि दर्जनों मजदूरों के खिलाफ झूठी रपटें दर्ज कर हवालात में भेजा जा चुका है।

इस संघर्ष ने मजदूरों के सामने यह भी साफ कर दिया है कि किसी पूंजीवादी-चुनावी पार्टी (सी.बी.आई.-सी.पी.एम.) सहित से जुड़ी ट्रेड यूनियनें आज उनके संघर्षों का नेतृत्व दे सकने में अक्षम होकर खुलेआम मालिकों की दलाली पर उतर आयी हैं।

'सीटू नेतृत्व की अवसरवादिता का लाभ आज भारतीय मजदूर संघ (आर.एस.एस.-भाजपा से सम्बद्ध)' जैसी घोर मजदूर विरोधी यूनियनें उठा रही हैं। यह हमेशा होता आया है कि मजदूरों के बीच नकली वामपन्थी यूनियनें पूंजीपति वर्ग के एजेण्टों का ही काम करती आयी हैं और अपनी गद्दारियों से फासिस्टों को अपनी जड़ें जमाने के लिए मौका प्रदान करती रही हैं। इस कारखाने के साथ-साथ इस समूचे औद्योगिक क्षेत्र में यही हो रहा है। बी.एम.एस. तेजी से अपने पांच पसारती जा रही है और पहले से बंटे हुए मजदूरों के बीच नया बंटवारा पैदा करती जा रही है।

'नेस्ले' के संघर्षरत मजदूर साथियों को इन सच्चाइयों को समझना होगा और अपने बीच से एक नया क्रान्तिकारी नेतृत्व पैदा करने के रास्ते पर चलना होगा, तभी वे अपने अस्तित्व की लड़ाई को भी व्यापक मजदूरों की एकजुटता के दम पर जीत पायेंगे औरसाथ ही अपनी लड़ाई को देशी-विदेशी पूंजीपतियों के समूचे राजकाज को उखाड़ने की लम्बी लड़ाई की दिशा में ले जा पायेंगे। •

नेस्ले बिस्कुट फैक्ट्री में प्रबन्धतंत्र का जोरो-जुल्म

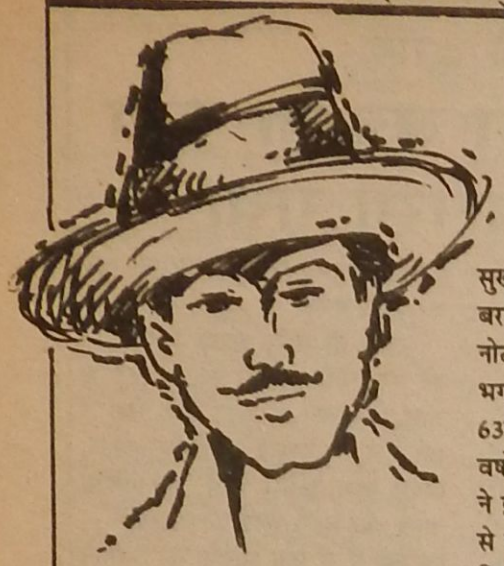

शहादत-दिवस (23 मार्च) के अवसर पर
भगतसिंह की जेल नोटबुक से

शहीदे-आजम भगतसिंह और उनके साथी सुखदेव और राजगुरु की शहादत की 69वीं बरसी के अवसर पर हम भगतसिंह की जेल नोटबुक से एक टिप्पणी प्रस्तुत कर रहे हैं। भगतसिंह की जेल नोटबुक उनकी शहादत के 63वर्षों बाद पहली बार अंग्रेजी में और 68 वर्षों बाद हिंदी में प्रकाशित हो सकी। भगतसिंह ने इस नोटबुक में अमेरिकी और फ्रांसीसी क्रांति से लेकर सोवियत क्रांति तक के बारे में, इनके सिद्धांतों के बारे में विभिन्न लेखकों के विचार नोट किये हैं तथा विभिन्न लेखकों, कवियों, दार्शनिकों की कृतियों से भी उपयोगी उद्धरण दर्ज किये है। यह जेल नोटबुक एक महान विचार-यात्रा का दुर्लभ साक्ष्य है जो एक राष्ट्रवादी जनवादी क्रांतिकारी से एक क्रांतिकारी समाजवादी होने तक की भगतसिंह की चिंतन-प्रक्रिया पर रोशनी डालती है। प्रस्तुत उद्धरण के लेखक जार्ज डी. हेरसन के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं मिल सकी, पर इस उद्धरण को अपनी डायरी में दर्ज करने से भगतसिंह के विचारों में आ रहे बदलाव को समझने में विशेष मदद मिलती है। – सम्पादक

कोई वर्ग नहीं ! कोई समझौता नहीं !!

(जार्ज डी. हेरसन)

समाजवादी आन्दोलन के दौरान एक ऐसा वक्त आ रहा है, और सम्भव है, वह वक्त आ चुका है, जब सुधरी हुई दशाएं या समायोजित उजरतें मजदूरों की मांग का जवाब नहीं रह जायेंगी, और तब ये चीजें सामान्य बुद्धि के लिए एक अपमान के अलावा और कुछ नहीं सिद्ध होंगी। आज दुनिया भर में जो समाजवादी आन्दोलन चल रहा है वह बेहतर उजरतों, सुधरी हुई पूंजीवादी दशाओं या पूंजीवादी मुनाफे में हिस्सा बंटाने के लिए नहीं चल रहा है; यह चल रहा है उजरतों और मुनाफों के खात्मे के लिए, और पूंजीवाद एवं निजी पूंजीपतियों की समाप्ति के लिए। सुधरी हुई राजनीतिक संस्थाएं, पूंजी और श्रम के बीच समझौता कराने वाली परिषदें, परोपकार और विशेषाधिकार जो पूंजीपतियों की खैरातों के अलावा और कुछ नहीं हैं – इनमें से कोई भी चीज उस सवाल का जवाब नहीं दे सकती जो मंदिरों, सत्ता के सिंहासनों और संसदों को कंपकंपा रहा है। जो लोग दबे-कुचले हैं और जो लोग उनकी पीठ पर सवार होकर आगे बढ़े हुए हैं, अब इन दोनों के बीच कोई अमन-चैन नहीं रह सकता। अब वर्गों के बीच कोई मेल-मिलाप नहीं हो सकता; अब तो वर्गों का सिर्फ अन्त ही हो सकता है। जब तक पहले न्याय न हो, तब तक सद्भावना की बात करना अनर्गल प्रलाप है, और जबतक इस दुनिया का निर्माण करने वालों का अपनी मेहनत पर अधिकार न हो, तब तक न्याय की बात करना बेकार है। दुनिया के मजदूरों की मांग का जवाब उनकी मेहनत की समूची कमाई के अलावा और कुछ नहीं हो सकता।

आर्थिक "सुधारों" के दूसरे दौर की एक और कड़वी खुराक

(पृष्ठ 3 से आगे)

है कि पहले ही जितना राशन मिलता था गरीबी रेखा के नीचे रहने वाली आबादी उसे पूरा नहीं खरीद पाती थी और हजारों टन अनाज भारतीय खाद्य निगम के गोदामों में ही सड़ जाया करता था। अब कोटा बढ़ने से सिर्फ यही होगा कि राशन कोटे के तंत्र से जुड़ा अमला अनाज को खुले बाजार में बेचकर और अधिक मालामाल होगा और पहले से भी अधिक मात्रा में अनाज खाद्य निगम के गोदामों में सड़ जायेगा।

नयी भर्तियों पर रोक और निजीकरण की रफ्तार और तेज

वित्त मंत्री ने बजट घाटे में कमी करने की इसी मजबूरी की आड़ में अगले एक साल के लिए कुछेक विभागों, जैसे सेनाओं, अर्द्धसैनिक बलों, दूरसंचार एवं डाक सेवाओं को छोड़कर सभी सरकारी विभागों में नयी भर्तियों पर पूरी रोक लगा दी है। इसके साथ ही निजीकरण की गाड़ी को भी और सरपट भगा दिया है।

सार्वजनिक क्षेत्र के सभी "कम महत्व वाले" उद्यमों में सरकार अपना शेयर घटाकर 26 प्रतिशत तक ले आयेगी। सरकार की नजरों में "बुरी तरह बीमार" सार्वजनिक उपक्रमों की समूची शेयर पूंजी को बेच देने का फैसला ले लिया गया है। इन उद्योगों में कार्यरत कर्मचारियों को स्वैच्छिक (जबरिया!) सेवानिवृत्ति योजना के तहत निकाल बाहर करने और इनके शेयरों की बिक्री से प्राप्त धन से सरकार अपने घरेलू कर्जों को चुकायेगी। मेहनतकश जनता के खून-पसीने को निचोड़कर खड़े किये इन सरकारी उपक्रमों को बेचकर अब सरकार अपनी फिजूलखर्चियों की खातिर लिये गये कर्जों की भरपाई करेगी। यह सरकारी लूटपाट है, और कुछ नहीं।

इसके साथ ही, इस बार नरसिंहम कमेटी की सिफारिशों पर अमल करते हुए राष्ट्रीयकृत बैंकों में सरकारी शेयर पूंजी घटाकर 33 प्रतिशत तक लाने का निर्णय ले लिया गया है। इस फैसले के बाद भी वित्त मंत्री ने शेखी बघारी कि बैंकों का निजीकरण नहीं किया जायेगा। दरअसल, पिछले दिनों जब पूंजीपतियों की सिफारिश पर सरकार ने बैंकों के निजीकरण की चर्चा चलायी थी तो देश भर में बैंक कर्मियों ने जो जबर्दस्त प्रतिवाद किया था, उससे सबक लेते हुए सरकार ने चोर दरवाजे से बैंकों के निजीकरण का रास्ता अख्तियार किया है। स्पष्ट है कि बैंकों में लगे हुए सरकारी शेयर देशी-विदेशी पूंजीपति ही खरीदेंगे और उनके प्रबन्धतंत्र पर कब्जा जमा लेंगे। यह निजीकरण नहीं तो और क्या है? इसके साथ ही स्वैच्छिक अवकाश योजना या किसी अन्य कुयोजना के तहत बैंक कर्मचारियों की छंटनी की प्रक्रिया भी देर-सवेर शुरू हो जायेगी।

"अपनी जनता" पर सरकार की मेहरबानियां

बजट प्रावधानों के चाबुक से जहां वित्त मंत्री ने गरीब-मेहनतकश आबादी को लहूलुहान कर दिया है वहीं "अपनी जनता" पर मेहरबानियों के फूल बरसाये हैं। सिनेमा उद्योग को संकट से उबारने के लिए विदेशों में बने विभिन्न प्रकार के कैमरों व अन्य तकनीकी उपकरणों पर आयात शुल्क में भारी कमी कर दी गयी है। इसके साथ ही सेलुलर फोन, कम्प्यूटर की फ्लापी एवं कम्प्यूटर सम्बन्धी अन्य उपकरणों को भी सस्ता कर दिया गया है। आयात शुल्कों में की गयी इन कटौतियों का लाभ उच्च मध्यम वर्ग ही उठायेगा। आयात शुल्कों में की गयी इस कमी से आने वाले दिनों में जब एक बार फिर भुगतान सन्तुलन का संकट पैदा होगा तो अन्ततोगत्वा इसका बोझ एक बार फिर मेहनतकश जनता पर पटका जायेगा। बजट में कुछेक औद्योगिक उत्पादों पर उत्पाद शुल्क बढ़ाने के निर्णय को वित्त मंत्री यह कहकर भरमा रहे हैं कि उन्होंने सबके साथ बराबरी से कठोरता की है। लेकिन, यह चीज अब किसी से छुपी नहीं है कि पूंजीपति इस बढ़े हुए शुल्क की वसूली भी जैसे-तैसे आम उपभोक्ताओं से कर लेंगे। उनके अपने मुनाफे पर कोई आंच नहीं आयेगी।

इसके साथ ही विदेशी सटोरियों को एक बार फिर रियायतों का नया तोहफा दिया गया है। अब वे भारतीय कम्पनियों के 30 के बजाय 40 प्रतिशत तक शेयर खरीद सकेंगे। शेयर मार्केट को अन्य कई प्रकार की रियायतें भी दी गयी है। दरअसल, देश में जबसे आर्थिक "सुधारों" की प्रक्रिया शुरू हुई है, तब से मुद्राकोष विश्व-बैंक, विश्व-व्यापार संगठन निर्देशित नीतियों से मंत्र पाकर सरकारों की सबसे अधिक चिन्ता वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की रही है। वित्तीय क्षेत्र में सुधार को अर्थव्यवस्था के सुधार का पैमाना मानते हुए सट्टा बाजार को तरह-तरह की रियायतें देने का सिलसिला शुरू हुआ है। देशी-विदेशी निवेशक आज फटाफट मुनाफा कमाने के लिए शेयर बाजार, मनोरंजन उद्योग, दूरसंचार और तथाकथित ज्ञान आधारित उद्योगों में ही पूंजीनिवेश को लालायित हैं। बुनियादी और आधारभूत उद्योगों में, यानी प्रत्यक्ष उत्पादक गतिविधियों में पूंजीनिवेश करने के लिए वे कतई दिलचस्पी नहीं ले रहे हैं। यह सच्चाई सामने आ चुकी है कि पिछले नौ वर्षों में अनेकानेक लुभावने चारे फेंकने के बाद भी देश में जो विदेशी पूंजीनिवेश हो रहा है वह अधिकांशत: इन्हीं कम से कम रोजगार पैदा करने वाले अनुत्पादक क्षेत्रों में हो रहा है। मौजूदा बजट के प्रावधानों को भी इसी रोशनी में समझा जा सकता है।

वित्तीय सुधार के नाम पर इस बार बजट में भारतीय रिजर्व बैंक से सरकारी नियंत्रण पूर्णत: हटाकर स्वायत्त कर दिया गया है। देशी बड़े पूंजीपति और अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी के सरदार लम्बे समय से यह मांग कर रहे थे। अब बैंकों के लिए ब्याज दरों को निर्धारित करने और विदेशी मुद्रा की विनिमय दरों एवं आवाजाही पर सरकार का कोई नियंत्रण नहीं रहेगा। यह कदम उठाकर सरकार ने देश में दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों जैसा वित्तीय संकट पैदा होने की भूमिका लिख दी है।

रक्षा बजट में हुई वृद्धि
(करोड़ रुपयों में)

वर्ष	रक्षा बजट
1995-96	26856
1996-97	29505
1997-98	35278
1998-99	39897
1999-2000	48504*
2000-2001	58587**

*वास्तविक व्यय **बजट अनुमान
स्रोत: बजट-2000

किसकी कीमत पर कैसी कुरबानियां

इस बार बजट में गरीबों के मुंह का निवाला छीनकर कारगिल युद्ध और देश की सीमाओं की सुरक्षा की दुहाई देते हुए रक्षा बजट में 2802 प्रतिशत (13000 करोड़ रुपये) की भारी बढ़ोत्तरी की गयी है। अन्धराष्ट्रवादी भावनाएं भड़काकर जनता की रोजी-रोटी छीनना फासिस्टों की आर्थिक-राजनीतिक रणनीति का एक प्रमुख अंग है। इसी रणनीति पर अमल करते हुए सरकार ने रक्षा बजट में बेतहाशा बढ़ोत्तरी करके अपने सैन्यवादी मंसूबों को अमली जामा पहनाया है। पूंजीपतियों के मुनाफे की रक्षा को देश की रक्षा का पर्यायवाची बनाते हुए प्रधानमंत्री-वित्तमंत्री जगह-जगह देश की जनता से कुर्बानियों की अपीलें जारी कर रहे हैं। पिछले दिनों बजट पर आयोजित एक गोष्ठी में वित्त मंत्री ने बेहयाई से कहा कि "यह वक्त बजट से कुछ लेने का नहीं, त्याग और बलिदान का है"... आम लोगों को सोचना चाहिए कि वे देश के लिए क्या कर रहे हैं।" सच तो यह है कि वित्तमंत्री महोदय, कि जनता अबतक त्याग और बलिदान ही करती रही है। पर इस त्याग और बलिदान से हमेशा ही मुनाफाखोरों की तिजोरियां ही भरी जाती रही हैं। और अब तो शायद आप खून का आखिरी कतरा तक निचोड़ लेना चाहते हैं। जनता को त्याग-बलिदान की नसीहत हर लुटेरी सत्ता के बौद्धिक चाकर देते रहे हैं। जनता को त्याग-बलिदान करना होगा, यह हम भी मानते हैं, पर थैलीशाहों के मुनाफे के लिए नहीं, बल्कि मुनाफे की व्यवस्था को तबाह करने के लिए।

●

बजट के बाद रसोई गैस और किरासन तेल के दाम में भी भारी बढ़ोत्तरी

बजट 2000 के एक पखवारे बाद सरकार ने रसोई गैस और किरासन के तेल के दाम में भी बढ़ोत्तरी कर दी। रसोई गैस के हर सिलिण्डर के लिए अब रु. 50.00 अधिक देना होगा। इसी तरह किरासन तेल की कीमत भी रु. 2.50 प्रति लीटर महंगी हो गयी है। सरकार ने इस बढ़ोत्तरी के लिए तेल पूल के घाटे को पूरा करने का बहाना बनाया है। इस बात की पूरी सम्भावना है कि अगले जून तक डीजल की कीमत में भी बढ़ोत्तरी की जायेगी। वैसे सरकार बजट से पहले ही पेट्रोल की भी कीमत बढ़ा चुकी थी। आम बजट से पहले पेश रेल बजट में भी डीजल एवं अन्य पेट्रोलियम पदार्थों की ढुलाई का भाड़ा भी बढ़ाया गया था। इस बढ़ोत्तरी का असर सभी आवश्यक वस्तुओं पर पड़ना शुरू हो चुका है। बाजार में आवश्यक वस्तुओं की कीमतों में रेल बजट और आम बजट के प्रभावों से उछाल आना शुरू भी हो चुका है। अब सरकार चाहकर भी यह दावा नहीं कर सकती कि बजट से महंगाई नहीं बढ़ेगी।

पूर्वोत्तर रेलवे के छपरा कचहरी लोकोशेड के रनिंग कर्मचारियों पर रेल प्रशासन का कहर

(बिगुल संवाददाता)

छपरा। पिछले एक वर्ष से छपरा कचहरी लोको शेड के रनिंग कर्मचारियों का रेल प्रशासन द्वारा उत्पीड़न बर्दाश्त की हदों को पार करता जा रहा है। हालत यह है कि महज एक वर्ष के भीतर रेल प्रशासन ने बेहद मामूली आरोपों की सजा के तौर पर छह रनिंग कर्मचारियों को नौकरी से निकालकर सड़कों पर फेंक दिया है। इनमें तीन चालक एवं तीन डीजल सहायक हैं। इन निकाले गये कर्मचारियों पर आरोप बेहद मामूली थे। एक चालक एवं डीजल सहायक को तो एक ऐसी घटना के लिए सेवामुक्त कर दिया गया जिसमें न तो कोई जनहानि हुई थी और न ही रेल सम्पत्ति को कोई नुकसान पहुंचा था।

वैसे तो रनिंग कर्मचारियों का रेल प्रशासन द्वारा बात-बात पर उत्पीड़न करना एक आम बात है लेकिन अब प्रशासनिक निरंकुशशाही अपने चरम पर है। बेहद मामूली आरोपों में नौकरी से बर्खास्त करने की कार्रवाइयां करते समय प्रशासनिक अधिकारी एक पल भी नहीं हिचक रहे हैं। छोटी-मोटी सजाओं— जैसे निलम्बन, वेतन न्यूनतम करना, पास बन्द करना, पदावनति आदि की तो बात करना ही बेकार है।

समाज के एक आम आदमी के लिए यह कल्पना करना भी कठिन है कि रेलवे के रनिंग कर्मचारी किन भीषण मानसिक दवाओं के तहत अपनी ड्यूटी कर रहे हैं। एक्सप्रेस गाड़ियों के चालकों से पन्द्रह से बीस घण्टे तक लगातार ड्यूटी ली जा रही है। मालगाड़ियों के चालकों की ड्यूटी की तो कोई सीमा ही नहीं है। स्पष्ट है कि सुरक्षा-संरक्षा की रट लगाने वाला रेल प्रशासन खुद ही दुर्घटनाओं को न्यौता देता है। हाल ही में किये गये एक सर्वेक्षण ने भी इस सच्चाई को पुष्ट किया है कि रनिंग कर्मचारियों को किन अमानवीय दशाओं में ड्यूटी करनी पड़ती है। सर्वेक्षण के अनुसार मालगाड़ी के चालकों को एक बार में औसतन बारह से सोलह घण्टे ड्यूटी करनी पड़ती है।

इस बेहिसाब काम के घण्टे के

पेज 5 पर जारी

लेनिन के जन्मदिन (22 अप्रैल) के अवसर पर

सर्वहारा वर्ग की पार्टी का वास्तविक कार्य-लक्ष्य

व्ला० इ० लेनिन

हम मार्क्सवादी सैद्धांतिक दृष्टिकोण को ही पूरे तौर से अपना सम्बल मानते हैं: मार्क्सवाद ने ही पहले-पहल समाजवाद को कोरी कल्पना से ऊपर उठाकर एक विज्ञान का रूप दिया था, इस विज्ञान के लिए एक मजबूत नींव तैयार की थी, और उस मार्ग को बतलाया था जिस पर चल कर इसका सांगोपांग आगे विकास तथा विवर्धन किया जाना चाहिए। इस बात को बतला कर कि, मजदूरों को किराये पर रखने की व्यवस्था, श्रम-शक्ति को खरीदने की व्यवस्था मुट्ठी भर पूंजीपतियों द्वारा, जमीन, कल-कारखानों, खानों, आदि के मालिकों द्वारा करोड़ों सम्पत्तिविहीन लोगों को गुलाम बनाये रखने की वास्तविकता पर किस प्रकार पर्दा डाले रहती है—मार्क्सवाद ने आधुनिक पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था के चरित्र को उजागर कर दिया था। उसने इस बात को स्पष्ट कर दिया था कि समस्त आधुनिक पूंजीवादी विकास में बड़े पैमाने के उत्पादन के द्वारा छोटे पैमाने के उत्पादन का उन्मूलन कर देने की प्रवृत्ति होती है, और (इस प्रकार– अनु.) वह ऐसी परिस्थितियां पैदा कर देता है। जो समाज की समाजवादी व्यवस्था की स्थापना को सम्भव तथा अनिवार्य बना देती हैं। उसने हमें यह सिखलाया था कि गहरे जमे हुए रीति-रिवाजों, राजनीतिक कुचक्रों, दुरूह कानूनों तथा जटिल सिद्धांतों की ओट में चल रहे वर्ग संघर्ष को, उस संघर्ष को कैसे देखा-पहचाना जाये जो सब प्रकार के सम्पत्तिशाली वर्गों तथा सम्पत्ति-विहीन जन समुदायों के, उस सर्वहारा वर्ग के, बीच चल रहा है जो समस्त सम्पत्ति-विहीनों का अगुवा है। एक क्रांतिकारी समाजवादी पार्टी के वास्तविक कार्य-लक्ष्य को स्पष्ट करते हुए उसने बतलाया था कि : उसे समाज के पुनर्गठन की योजनाएं तैयार करने के काम में नहीं लगना चाहिए, पूंजीपतियों और उनके लगुओं-भगुओं को मजदूरों की दशा सुधारने के उपदेश देने के काम में नहीं लगना चाहिए, उसे षड़यन्त्र रचने के चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए, बल्कि उसे चाहिए कि सर्वहारा वर्ग के वर्ग संघर्ष को संगठित करे और इस संघर्ष का—जिसका अन्तिम लक्ष्य सर्वहारा वर्ग द्वारा राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करना तथा समाजवादी समाज का संगठन करना है—नेतृत्व करे।

('हमारा कार्यक्रम' शीर्षक लेख से, 1899 में लिखित, 1925 में पहली बार प्रकाशित। सम्पूर्ण ग्रंथावली, खण्ड-4)

('समाजवाद और संस्कृति' पुस्तक पृष्ठ 15-16 से)

नोएडा लेदर गारमेण्ट उद्योग के मजदूरों का संघर्ष व्यापक मजदूर एकता की शानदार मिसाल

(पृष्ठ 1 से आगे)

मजदूरों को एकजुट करना शुरू किया, जिसके परिणामस्वरूप 'लेदर गारमेण्ट श्रमिक संघर्ष संघ' अस्तित्व में आया और इसके तहत सभी श्रमिकों ने एक साथ मिलकर लड़ने का निर्णय लिया। यद्यपि ऐसा प्रयास ओखला के लेदर उद्योग से जुड़े मजदूरों ने पहले ही कर दिखाया था और हजारों मजदूरों ने एक साथ पूरे ओखला में हड़ताल कर अपनी मांगें मनवाने में सफलता भी हासिल की थी, लेकिन नोएडा के स्तर पर यह अपने किस्म का पहला प्रयास है। अब इस नये प्रयास ने ओखला एवं नोएडा दोनों जगहों के लेदर गारमेण्ट उद्योग के मजदूरों ने आपसी एकता को और अधिक मजबूत कर दिया है।

अपनी इस नयी एकजुटता के तहत विगत 29 फरवरी 2000 को करीब 2000 मजदूरों ने 'लेदर गारमेण्ट श्रमिक संघर्ष संघ' के नेतृत्व में जिलाधिकारी, गौतमबुद्धनगर के कार्यालय पर लगभग दो घण्टे तक जबर्दस्त धरना-प्रदर्शन कर जिलाधिकारी को ज्ञापन दिया। ज्ञापन में मुख्य रूप से निकाले गये श्रमिकों को तुरन्त काम पर वापस लेने, मजदूरों का मस्टररोल पर नाम चढ़ाने, मजदूरों का परिचय पत्र बनवाने, ई.एस.आई. एवं पी. एफ. सुविधा देने, महंगाई के अंकों के आधार पर भत्तों में बढ़ोत्तरी, काम की गारण्टी तथा काम न होने परन्यूनतम वेतन की गारण्टी आदि मागें शामिल थीं। साथ ही पन्द्रह दिनों के भीतर इन मांगों पर कार्रवाई न होने पर आन्दोलन को विस्तारित करने की चेतावनी भी दी गयी।

आन्दोलन में शामिल एक मजदूर ने 'बिगुल टीम' को बताया कि पिछले तीन महीने से चल रहे इस आन्दोलन में नोएडा के सभी लेदर गारमेण्ट उद्योगों के मजदूर शामिल हैं। उसने बताया कि 'इस आन्दोलन में ज्यादातर लेदर गारमेण्ट उद्योग के कारीगर हैं जो पीस रेट पर काम करते हैं। इस आन्दोलन से पहले हमसे 12 से 16 घण्टे काम लिया जाता था तथा सुविधा के नाम पर कुछ भी नहीं था। पीस रेट मजदूरी भी बहुत कम थी। पीस रेट बढ़ाने की मांग करने पर मालिक कहता था कि तुम अपना ड्यूटी टाइम बढ़ा लो। तब हमें मजबूरन 12 से लेकर 16-16 घण्टे तक काम करना पड़ता था, क्योंकि आठ घण्टे में इतनी दिहाड़ी नहीं बनती थी कि गुजारा हो सके। पहले हमें 'नाइट ड्यूटी' करने पर मात्र 20 रुपये रात के खाने के लिए मिलते थे, लेकिन अब हम लोगों ने इसे बढ़वाकर 100 रुपये करवा लिया है।' मजदूर साथी ने बताया कि अभी भी कम्पनी के किसी भी रिकार्ड में हमारा नाम नहीं है क्योंकि कोई दुर्घटना होने पर मालिक जवाबदेह नहीं बनना चाहता। उसने कहा कि हमारी मांग है कि हमें 'परमानेण्ट' किया जाये तथा कार्यस्थल पर सुरक्षा की गारण्टी की जाये।

ओखला में काम करने वाले एक लेदर गारमेण्ट मजदूर ने हमारी टीम को बताया कि जब हम लोगों ने ओखला में अपनी एकता कायम कर आन्दोलन किया तो वहां की एक लेदर गारमेण्ट कम्पनी पुनिहानी ने कम्पनी में तालाबन्दी कर दी और रातोंरात 300 मशीनों को उखाड़कर ओखला से नोएडा आई-5, सेक्टर-9 एवं सेक्टर 59 में स्थानान्तरित कर दिया। इससे मालिक का तो कोई नुकसान नहीं हुआ जबकि उसमें कार्यरत मजदूर बेरोजगार हो गये। 'पुनहानी' के मालिक की इस चालबाजी के खिलाफ ओखला के लेदर गारमेण्ट उद्योग के साथियों के आह्वान पर नोएडा के मजदूरों ने 'पुनहानी' की नोएडा इकाइयों के बहिष्कार का निर्णय लिया है जो मजदूरों के भाईचारे की एक शानदार मिसाल है। आज जहां एक तरफ जब देश का पूंजीपति वर्ग फिक्की, एसोचैम, सी. आई.आई. जैसे अपने संगठनों में अच्छी तरह संगठित होकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से समझौते कर रहा है, मजदूर वर्ग पर एकजुट हमले कर रहा है और हमारे देश के सस्ते श्रम को विभिन्न तरीकों से लूट रहा है, वहीं दूसरी तरफ उनकी सेवा में तत्पर जनविरोधी सरकारें उनकी 'मैनेजमेण्ट कमेटी' का काम निभाते हुए पहले से ही प्रभावहीन श्रम कानूनों में और ढील देने का कुचक्र रच चुकी हैं। ऐसे में, देशी-विदेशी पूंजीपतियों के शोषण-उत्पीड़न के खिलाफ कोई भी संघर्ष सिर्फ एक फैक्टरी तक सीमित रखकर नहीं जीता जा सकता। 1997 में 'मदरसन सूमी' के आन्दोलन, डी. एस. ग्रुप में चले आन्दोलन, 'फ्लैक्स' के आन्दोलन आदि अन्य आन्दोलन की असफलताओं से भी यही सच्चाई जाहिर होती है। ऐसे में लेदर गारमेण्ट के मजदूरों की दिल्ली एवं नोएडा के स्तर की इलाकाई एकता स्थापित करना अपने आप में एक शानदार शुरुआत है।

लेकिन, सिर्फ इतना ही काफी नहीं है। यह तो महज एक शुरुआत है। अपनी ताकत को लगातार मजबूत करते रहने के लिए लेदर गारमेण्ट उद्योग के साथ-साथ अन्य कारखानों के मजदूर साथियों के साथ भी एकता कायम करनी होगी। इसके साथ ही साथ पूंजीपति वर्ग से दीर्घकालिक सतत संघर्ष करने के लिए यह बेहद जरूरी है कि मजदूर साथियों के बीच क्रान्तिकारी विचारधारा का लगातार प्रचार-प्रसार किया जाये ताकि मजदूरों के बीच से सच्चा क्रान्तिकारी नेतृत्व पैदा हो सके।

रनिंग कर्मचारियों पर....

पेज 4 से आगे

साथ-साथ कुछ और भी चीजें जुड़ जाती हैं जो रनिंग कर्मचारियों के काम को और भी कठिन बना देती हैं तथा रेल दुर्घटनाओं का कारण बनती हैं। जैसे, पेड़ की ओट, झाड़ियों के पीछे छिपे सिग्नल तथा किलोमीटर पोस्ट। खराब मौसम और घना कुहासा हालत को और बदतर बना देते हैं, जब दस मीटर भी आगे देखना सम्भव नहीं हो पाता। इस पर भी कोढ़ में खोज यह कि विकसित देशों की तर्ज पर एक ही ट्रैक पर एक के पीछे दूसरी गाड़ी चलायी जाती है। ये सारी चीजें मिलकर दुर्घटनाओं की परिस्थितियां तैयार होती हैं, जिसके लिए पूरी तरह रेल प्रशासन जिम्मेदार है। लेकिन, दुर्घटना होने पर गाज सिर्फ रनिंग कर्मचारियों पर गिरती है।

रनिंग कर्मचारियों की सर्वाधिक मजबूत यूनियन 'ऑल इण्डिया लोको रनिंग स्टाफ एसोसियेशन' (AILRSA) ने रनिंग कर्मचारियों के काम के घण्टे कम करने व रेल परिचालन व्यवस्था की खामियों को दूर करने और दुर्घटनाओं को रोकने के अन्य उपायों के सम्बन्ध में रेल प्रशासन का बार-बार ध्यान आकृष्ट कराया है, लेकिन वह इस पर कोई कार्रवाई करने के बजाये सिर्फ ''सुरक्षा एवं संरक्षा'' की जुगाली कर आम जनता को दिग्भ्रमित करने एवं अपनी चमड़ी बचाने की कोशिश करता रहता है। ●

नारी सभा

अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस (8 मार्च) के अवसर पर नारी सभा का जुलूस एवं सभा

लाल पचरम के साथ बढ़ते देहाती मेहनतकश औरतों के कदम

(बिगुल संवाददाता)

मर्यादपुर, मऊ। "8 मार्च का आह्वान, अपनी ताकत को पहचान!" "भीख नहीं अधिकार चाहिए, न्याय और सम्मान चाहिए!" "हम जागेंगे तब जागेगा, असली हिन्दुस्तान, हक लेंगे आजादी लेंगे, हमने ली है ठान!" "क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य जिन्दाबाद! पूंजीवाद-साम्राज्यवाद मुर्दाबाद!'' ''शहीदे आजम भगत सिंह अमर रहें" आदि नारों से 8 मार्च को सुबह-सुबह इस इलाके की दिशाएं एक बार फिर गूंज उठीं। नारी सभा की स्थानीय इकाई के नेतृत्व में मेहनतकश स्त्रियों की तनी मुट्ठियां, हवा में लहरा रहे लाल परचम और नारों का उद्घोष अब मर्यादपुर के लिए कोई नयी बात नहीं रही। पांच साल पहले उठे कदमों का साथ देने वाले कदमों एवं परचम थामने वाले हाथों की संख्या बढ़ती जा रही है। कारवां बढ़ता जा रहा है।

नारी सभा की देख-रेख में संचालित **दुर्गा बोहरा प्राथमिक पाठशाला** के प्रांगण से शुरू हुआ जुलूस आस-पास के गांवों —उतिराई, अजोरपुर, कोटियां, बांकेपुर, लखनौर, मर्यादपुर हरिजन बस्ती, भेंड़वरामल, डुमरी और मर्यादपुर बाजार तक लगभग 4-5 किमी. का चक्कर लगाते हुए वापस पुनः पाठशाला पर पहुंचकर जुलूस सभा में बदल गया।

सभा को सम्बोधित करते हुए नारी सभा की कार्यकर्ता राजुली देवी ने शिकागो की उन शहीद बहनों के इतिहास की याद दिलायी जिनकी कुर्बानियों की याद में 8 मार्च को दुनिया भर में महिलाएं बराबरी, न्याय और सम्मान की लड़ाई को आगे बढ़ाने का नया संकल्प लेती हैं।

मंगरी देवी ने वर्तमान लुटेरी व्यवस्था की चालों को उजागर करते हुए कहा कि इसकी मंशा ही यही है कि गांवों में गरीब मजदूर-किसानों के आपसी झगड़े बने रहें और वे एकजुट होकर अपने हक की लड़ाई न लड़ सकें। अपने आस-पास के चकरोडों की नजीर पेश करते हुए उन्होंने कहा कि ग्रामप्रधान और अधिकारियों की मिलीभगत से चकरोडों की सही पैमाइश नहीं हो पा रही है जिसके चलते गरीब मजदूर- किसान आपस में ही लड़ रहे हैं। पूंजीवाद व्यवस्था को उखाड़ फेंकने का आह्वान करते हुए उन्होंने कहा कि इस व्यवस्था के रहते झगड़ों का निपटारा असम्भव है।

श्रीमती केसिया देवी ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि विगत 3 दिसम्बर 1999 को **नारी सभा, देहाती मजदूर किसान यूनियन** और **नौजवान भारत सभा** द्वारा संयुक्त रूप से स्थानीय समस्याओं को लेकर तहसील मुख्यालय पर जो धरना-प्रदर्शन किया गया था उससे अधिकारियों के कान पर जूं तक नहीं रेंग रहा है। एस.डी.एम. द्वारा 12 सूत्री मांगों को पूरा करने के आश्वासन के बाद भी गांवों में गरीबों के राशन कार्ड, नाली-चकरोड, विधवा-वृद्धा पेंशन, निर्बल आवास आदि से सम्बन्धित समस्याएं जस की तस हैं। अधिकारियों की इस उदासीनता को तोड़ने के लिए उन्होंने संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिए ललकारा।

देहाती मजदूर किसान यूनियन के साथी हरिहर यादव ने सभा को सम्बोधित करते हुए देशी-विदेशी लुटेरे पूंजीपतियों के गंठजोड़ को उजागर किया। उन्होंने कहा कि हमें राशन कार्ड, नाली-चकरोड की लड़ाई से आगे जाना है। मेहनतकशों की असली लड़ाई सत्ता-परिवर्तन की है। हमें इस व्यवस्था का समूल नाश कर क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य की स्थापना करनी होगी, तभी हमारी समस्याएं स्थायी रूप से हल हो सकती हैं।

सभा के बाद नारी सभा के साथियों द्वारा क्रान्तिकारी लोकगीत प्रस्तुत किये गये। इस कार्यक्रम में देहाती मजदूर किसान यूनियन एवं नौजवान भारत सभा के कार्यकर्ता भी उपस्थित थे।

रेलवे की उत्पादन इकाइयों में कर्मचारियों की छंटनी की तैयारी

मार्च के अन्तिम सप्ताह में सरकार द्वारा लिये गये एक फैसले के अनुसार रेलवे की बारह उत्पादन इकाइयों में 3 प्रतिशत कर्मचारियों की छंटनी की योजना है। रेलवे बोर्ड काफी पहले से रेल के कर्मचारियों की संख्या धीरे-धीरे घटाते जाने की नीति पर अमल करता चला आ रहा है। पांचवे वेतन आयोग ने भी कर्मचारियों की संख्या में कमी करने की सिफारिश की थी। एक समय में मौजूद 18 लाख कर्मचारियों की तादाद धीरे-धीरे घटकर आज 12 लाख तक आ चुकी है। कई वर्षों से रेलवे के विभिन्न विभागों में भर्तियां नाममात्र की हो रही हैं। हजारों अप्रेन्टिसधारक वर्षों से दैनिक भत्तों पर काम करते चले आ रहे हैं, उनका नियमितीकरण नहीं हो रहा है। अब इस फैसले के बाद उनका भविष्य पूरी तरह सीलबन्द हो जायेगा। वैसे, रेलवे बोर्ड की योजना यह है रेलवे के कुल कर्मचारियों की संख्या को घटाकर 9 लाख तक सीमित कर दिया जाये। यह ताजा निर्णय इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर किया गया है। देश में सबसे अधिक रोजगार देने वाले रेलवे की हालत अब यह हो जायेगी कि उसकी उत्पादन इकाइयों में चमगादड़ लटकेंगे और कबूतर घौंसले बनायेंगे। ऐसे में अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ने के अलावा रेल मजदूरों के सामने अब कोई चारा नहीं बचा है।

● बिगुल संवाददाता

जनमुक्ति की अमर गाथा: चीनी क्रान्ति की सचित्र कथा (भाग तीन)

क्रान्ति का बिगुल बजा

1. माओ त्से-तुङ ने चीनी क्रान्ति के विशेष स्वरूप और रास्ते को समझने के लिए फरवरी, 1925 में कुछ पार्टी-कार्यकर्ताओं की टीम के साथ हुनान प्रान्त में गांव-गांव घूमकर जनता की जीवन-स्थितियों के समझने के लिए अध्ययन की शुरुआत की। वे किसानों के घरों में रुकते थे, अपने ज़रूरी खर्चों के लिए उनके साथ काम करते थे, उनसे बातचीत करते थे और उनकी ज़िन्दगी को समझने की कोशिश करते थे। इसके साथ ही, वे किसान यूनियनों का गठन भी करते जा रहे थे और किसानों के बीच से पार्टी-भरती का काम भी। इस समय तक शहरों में विदेशी प्रभुत्व और लूट के खिलाफ हड़ताल और प्रदर्शन भड़क उठे थे। गांवों में भी किसान-संघर्ष उभार पर थे। बहुतेरे इलाकों में काश्तारों ने कमरतोड़ लगान देने से इनकार करना और टैक्स वसूलने वालों को पीटना शुरू कर दिया था। ज़मीनें कब्ज़ा करने के साथ ही किसानों ने अपनी मिलिशिया बनाने का काम भी शुरू कर दिया था। उन्होंने जालिम ज़मींदारों और उनकी निजी सेनाओं का मुकाबला करना शुरू कर दिया। एक शहर में, जब लगान न चुकाने के कारण कुछ काश्तकारों को जेल में बंद कर दिया गया तो 6 हज़ार किसानों ने स्थानीय अधिकारी के घर के सामने प्रदर्शन किया और उसे गिरफ़्तार लोगों की रिहाई के लिए मजबूर कर दिया। ऐसी घटनाएं बढ़ने लगीं। अगस्त, 1925 में माओ ने शाओशान स्थित अपने पैतृक आवास के एक कमरे में माओ ने किसानों के बीच पहली पार्टी-शाखा की स्थापना की।

खेत जोतते चीनी किसान (1920 के दशक में)

माओ को किसानों के बीच पार्टी-कार्यों की ज़िम्मेदारी सौंपी गई। माओ का कहना था कि चीन में क्रान्तिकारी आन्दोलन का केन्द्र "देहाती इलाकों में" है जहां 70 फीसदी आबादी ग़रीब किसानों की है। जून, 1926 तक लगभग 10 लाख किसान संघों में संगठित हो चुके थे। एक वर्ष बाद, इनकी संख्या बढ़कर एक करोड़ हो गई। लेकिन कुछ पार्टी-नेता वास्तव में किसानों के संगठित करने के पक्ष में नहीं थे। छन तू-श्यू जैसे कुछ दक्षिणपंथी नेताओं का मानना था कि किसान "इतने पिछड़े और पुरातनपंथी" हैं कि वे कम्युनिज्म को स्वीकार ही नहीं सकते। अतिवामपंथी विचारों वाले चाङकुओ-ताओ और ली ली-सान का तर्क था कि चीनी मज़दूर वर्ग इतना मजबूत है कि वह खुद क्रान्ति कर सकता है, अतः पार्टी को किसानों को भूलकर सिर्फ शहरों में मज़दूरों को संगठित करना चाहिए। लेकिन माओ ने पिछड़े हुए, कृषि-प्रधान चीनी समाज में क्रांति में किसानों की भूमिका का सही आकलन किया और बताया कि चीनी क्रांति का नेतृत्व सर्वहारा वर्ग करेगा, जबकि मुख्य शक्ति किसान होंगे। साथ ही उन्होंने ग़रीब किसानों पर मुख्यतः भरोसा करने पर बल दिया। किसानों की भूमिका और भूमि-क्रान्ति के महत्व पर यह बहस पार्टी में लम्बे समय तक चलती रही।

2 जून, 1923 में हुई चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की तीसरी कांग्रेस में माओ केन्द्रीय कमेटी के सदस्य चुन लिये गये थे। पार्टी ने यह फैसला लिया कि सुन यात-सेन की कुओमिन्ताङ सरकार के साथ संयुक्त मोर्चा बनाया जाये और युद्ध सरदारों तथा साम्राज्यवादी ताकतों से लड़ने के लिए सेना संगठित करने में राष्ट्रवादियों का साथ दिया जाये। सैनिकों और कमाण्डरों की ट्रेनिंग के लिए कुओमिन्ताङ ने सोवियत संघ

उत्तरी अभियान के दौरान हाङचओ की सड़कों पर गश्त लगाती राष्ट्रवादी सेना (1926)

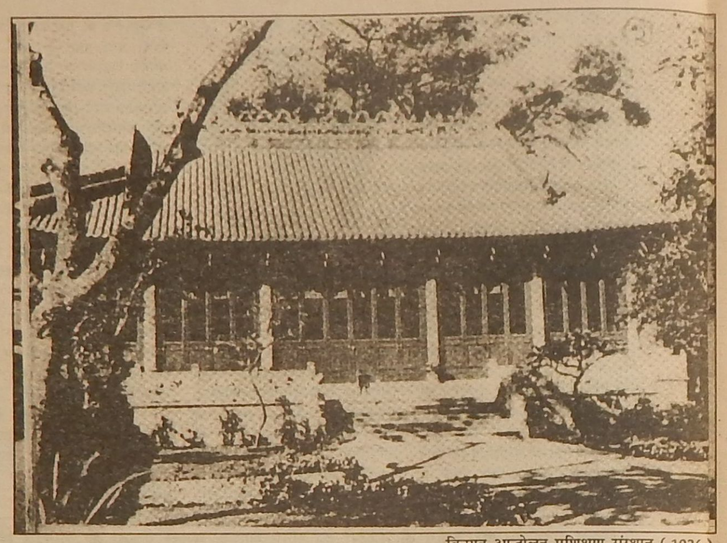

किसान आन्दोलन प्रशिक्षण संस्थान (1926)

3. 20 मार्च, 1926 को च्याङ ने व्हाम्पोआ सैनिक अकादमी के 25 कम्युनिस्टों को गिरफ़्तार करके अपनी मंशा जाहिर कर दी। कैण्टन में श्रमिक यूनियनों के मुख्यालयों पर छापे मारे गये, नेताओं को गिरफ़्तार कर लिया गया, हड़ताल-कमेटियों को निश्शस्त्र कर दिया गया तथा उनके हथियार ज़ब्त कर लिये गये। 14 मई को मार्शल लॉ घोषित कर दिया गया। लेकिन छन तू-श्यू जैसे नेताओं की घुटनाटेकू "संयुक्त मोर्चा नीति" के कारण, इतने के बावजूद कम्युनिस्ट पार्टी जवाबी कार्रवाई नहीं कर सकी। छन तू-श्यू का गुट मज़दूरों को ही शान्त रहने की नसीहत देता रहा। यहां तक कि जब च्याङ ने कुओमिन्ताङ में शामिल सभी कम्युनिस्टों की सूची मांगी और यह कहा कि अपने सदस्यों के लिए कम्युनिस्ट पार्टी के सभी निर्देश स्वीकृति के लिए उसके पास भेजे जायें, तब भी

सुन यात-सेन (बैठे हुए) च्याङ काई-शेक के साथ

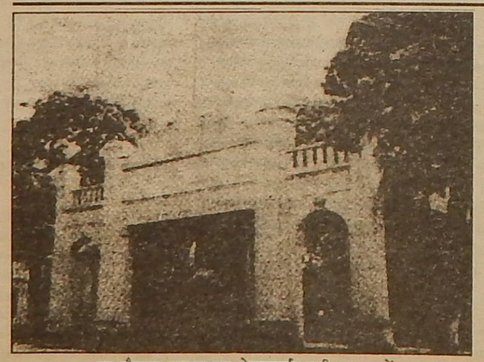

9ए कैण्टन कम्यून का हेडक्वार्टर इसी इमारत में था

छन तू-श्यू ने उसका विरोध नहीं किया। पर माओ के प्रबल विरोध के कारण ऐसा नहीं हो सका। कुओमिन्ताङ अब तेजी से एक राष्ट्रीय क्रांतिकारी पार्टी के बजाय एक सैनिक तानाशाह के हाथों में प्रतिक्रांतिकारी औजार बनती जा रही थी। जुलाई, 1926 में च्याङ काइ शेक के नेतृत्व में उत्तरी अभियान की शुरुआत हुई। युद्ध सरदारों के विरुद्ध इस अभियानमें कम्युनिस्टों ने भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। उत्तरी अभियान की सफलता का एक महत्वपूर्ण कारण शहरों में मज़दूरों की आम हड़ताल और गांवों में बड़े पैमाने पर किसान उभार था। मज़दूरों ने मिलिशिया बटालियनें बना लीं और अचानक हमला करके युद्ध सरदारों की छावनियों पर कब्ज़ा कर लिया। किसानों ने पुलिस चौकियों पर कब्ज़ा कर लिया और राष्ट्रवादी सेना की भरपूर मदद की। दो माह के भीतर कियाङसी, हुनान और हुपेइ प्रांतों पर कब्ज़ा हो गया।

की मदद से व्हाम्पोआ सैनिक अकादमी की स्थापना की। पार्टी के छन तू-श्यू जैसे नेताओं की संयुक्त मोर्चे की नीति यह थी कि "हर कीमत पर एकता क़ायम की जाये। पर माओ संयुक्त मोर्चे के भीतर पार्टी की आज़ादी बनाये रखने के पक्षधर थे और क्रांति में किसानों-मज़दूरों की प्रमुख भूमिका पर बल देते थे। उन्होंने क्रांति का नेतृत्व कुओमिन्ताङ को सौंप देने का विरोध किया। अन्य पार्टी कामरेडों के साथ माओ भी कुओमिन्ताङ में शामिल हुए और उन्हें कम्युनिस्ट पार्टी तथा कुओमिन्ताङ के बीच सम्पर्क तालमेल की ज़िम्मेदारी सौंपी गई।

1925 में सुन यात- सेन की मृत्यु के बाद कुओमिन्ताङ का नेतृत्व घोर प्रतिक्रियावादी और कट्टर कम्युनिस्ट विरोधी च्याङ काइ-शेक के हाथ में आ गया। मई में कुओमिन्ताङ की केन्द्रीय कमेटी ने चीन के युद्ध सरदारों को शिकस्त देने और देश के एकीकरण के लिए उत्तरी अभियान नामक प्रसिद्ध फौजी मुहिम की घोषणा की। च्याङ युद्ध सरदारों की सत्ता का नाश तो चाहता था पर किसानों-मज़दूरों का शोषण-उत्पीड़न खतम नहीं करना चाहता था। चीन की अर्द्धऔपनिवेशिक स्थिति बनाये रखने की चाहत रखने वाले सभी साम्राज्यवादी देश च्याङ का समर्थन कर रहे थे। च्याङ कम्युनिस्टों के साथ संयुक्त मोर्चे के समर्थन का दावा करते हुए और "विश्व क्रान्ति ज़िन्दाबाद," "साम्राज्यवाद मुर्दाबाद" आदि नारों का रट्टा लगाते हुए अंदर ही अंदर कम्युनिस्ट आंदोलन के खूनी दमन की योजना बना रहा था।

4. दिसम्बर, 1926 में माओ चाङशा लौट गये। वहां उन्होंने हुनान की पहली किसान-मज़दूर कांग्रेस में हिस्सा लिया। वे कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। उन्होंने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के किसान विभाग की स्थापना की और अपने व्यापक सर्वेक्षण के आधार पर किसानों के सामन्ती उत्पीड़न पर काफी विस्तार से लिखा और चीनी समाज का सांगोपांग वर्ग-विश्लेषण प्रस्तुत किया। 1926 के अंत तक कुओमिन्ताङ द्वारा किसान संघों के दमन के बावजूद लगभग 20 लाख किसान परिवार संघों में शामिल हो चुके थे। किसान अपनी पहल पर ज़मीन पर कब्ज़ा कर रहे थे और ज़मींदारों एवं भ्रष्ट अधिकारियों को दण्डित कर रहे थे। शहरों के कुछ प्रगतिशील बुद्धिजीवी और कुछ पार्टी नेता भी किसानों की इन कार्रवाइयों का विरोध कर रहे थे, पर माओ ने इनका पुरज़ोर समर्थन किया और कहा कि हज़ारों वर्षों पुराने सामन्ती उत्पीड़न को किसान ताकत के अधिकतम इस्तेमाल के बिना समाप्त नहीं कर सकते। साथ ही उन्होंने इस पर ज़ोर दिया कि कम्युनिस्ट पार्टी को आगे बढ़कर विद्रोही किसानों का नेतृत्व करना चाहिए।

मार्च, 1927 में माओ ने हुनान के किसान आंदोलन पर अपनी ऐतिहासिक जांच-पड़ताल रिपोर्ट प्रस्तुत की जो पांच सप्ताह के देहाती इलाकों के दौरे पर आधरित थी। इस रिपोर्ट में माओ ने चीन की ठोस परिस्थितियों में मार्क्सवाद को लागू करते हुए भूमि क्रांति की रूपरेखा प्रस्तुत की तथा चीनी क्रांति में कम्युनिस्ट पार्टी की नीति, रणनीति और आम रणकौशल को स्पष्ट किया। माओ ने यह विश्वास प्रकट किया कि जल्दी ही करोड़ों किसान एक शक्तिशाली तूफान की तरह उठ खड़े होंगे जो ज़मींदारों, भ्रष्ट अधिकारियों और साम्राज्यवादियों को चीन की भूमि से उखाड़ फेकेंगे।

गांवों में जहां भी किसान संघ गठित हो चुके थे, सत्ता पूरी तरह उनके हाथों में थी। जनता उठ खड़ी हुई थी। और यह साबित कर रही थी कि वह सत्ता सम्हाल सकती है। पुरानी सामंती व्यवस्था को उखाड़ने के साथ ही-नई व्यवस्था भी कायम हो गई थी। किसान आत्मरक्षार्थ संगठित और हथियारबंद थे। साथ ही वे शिक्षा का आंदोलन चला रहे थे, जमीन का वितरण कर रहे थे, सड़कें बना रहे थे तथा उपभोक्ता सहकारी समितियां और वितरण का नया ताना-बाना खड़ा कर रहे थे।

अमेरिकी सेना के साथ तिरुन्सिन में युद्ध-सरदार चाङ त्सो-लिन

5. इस किसान उभार और कम्युनिस्ट पार्टी की बढ़ती ताकत से भयभीत कुओमिंताङ ने संयुक्त मोर्चे से विश्वासघात करते हुए शहरों में क्रांतिकारी आंदोलन का दमन शुरू कर दिया। 24 मार्च 1927 को उत्तरी अभियान सेना की टुकड़ियों ने नानकिङ को मुक्त करा लिया। उसी रात अमेरिका, ब्रिटेन, जापान और फ्रांस के युद्धपोतों ने नानकिङ पर बमबारी करके भारी तबाही मचाई और चीनी क्रांति में साम्राज्यवादी हस्तक्षेप बढ़ने की पूर्व चेतावनी दे दी। च्याङ ने साम्राज्यवादियों से गुप्त रूप से हाथ मिला लिया और 12 अप्रैल 1927 को

शंघाई के तीसरे सशस्त्र विद्रोह में भाग लेने वाले श्रमिकों का दस्ता

च्याङ के सैनिकों द्वारा गिरफ्तार संदिग्ध कम्युनिस्ट (अप्रैल, 1927)

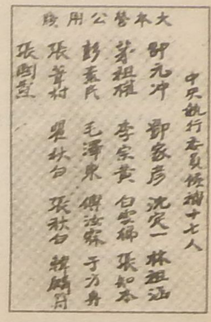

सुन यात-सेन द्वारा कुओमिंताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कम्युनिस्टों के नाम, उन्हीं के हस्तलेखन में (इस सूची में माओ का नाम भी शामिल है.)

प्रतिक्रांतिकारी राज्यविप्लव कर दिया। शंघाई में कम्युनिस्ट मज़दूर नेताओं को गिरफ्तार करके उनकी हत्या कर दी गई। इसके पूर्व 21 मार्च को शंघाई ट्रेड-यूनियन फेडरेशन के आह्वान पर तीसरी बार की आम हड़ताल में 8 लाख मज़दूरों ने भाग लिया था। और कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में सशस्त्र विद्रोह सात ज़िलों में फैल गया था। इसी उभार से भयाक्रांत च्याङ ने दमन-चक्र की शुरुआत कर दी। 14 अप्रैल को शंघाई में घुसने के बाद च्याङ की सेना ने मज़दूरों का जमकर कत्लेआम किया। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापकों में से एक – लीता चाओ को 17 अप्रैल को हत्या कर दी गई। नानकिङ में च्याङ ने अपनी सरकार की स्थापना की जिसे सभी पश्चिमी साम्राज्यवादी देशों ने मान्यता दे दी।

इन सबके बावजूद छन तू-श्यू गुट की आंखें नहीं खुलीं। अप्रैल 1927 में ही आयोजित पार्टी की पांचवी कांग्रेस में नेतृत्व पर हावी छन तू-श्यू ने हर हाल में कुओमिंताङ से "एकता" की वकालत की, अतिवादी नीतियों के लिए माओ की आलोचना की और किसानों-मज़दूरों के कत्लेआम का विरोध करने के बजाय गांवों में "क्रांति को धीमा करने" की लाइन रखी।

शंघाई में च्याङ द्वारा कत्लेआम की शुरुआत के दो दिनों बाद युद्ध-सरदारों ने भी किसानों से बदला लेने का संगठित अभियान शुरू कर दिया। अकेले छुपेइ

शंघाई में कुओमिंताङ द्वारा कत्लेआम (1927)

कुओमिंताङ की पहली कांग्रेस से साथ-साथ बाहर आते हुए सुन यात-सेन और कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापक सदस्य ली ता चाओ

प्रांत में ही 500 औरतों सहित 4700 किसानों की हत्या कर दी गई। संघर्ष प्रभावित क्षेत्रों में हज़ारों किसानों को ज़िन्दा जला दिया गया, बोटी-बोटी काट दिया गया या उनका अंग-भंग कर दिया गया। किसान सशस्त्र प्रतिरोध की इजाज़त मांगते रहे पर पार्टी नेतृत्व उनसे हथियार रखने को कहता रहा। मई में 20,000 किसानों और मज़दूरों ने नरसंहार का विरोध करने के लिए चाङशा की ओर कूच किया तो माओ ने उनका समर्थन किया, पर छन तू-श्यू के प्रभाव में किसान संघ और यूनियन के नेताओं ने उनसे हथियार रखवा दिये। नतीजा भयंकर रहा।

किसानों-मज़दूरों के नेताओं को गोली मार दी गई। अगले एक वर्ष के दौरान अकेले हुनान में एक लाख मज़दूर और किसान मारे गये। पार्टी के 15,000 कार्यकर्ता मार डाले गये। वामपंथी विचार वाले शिक्षकों, छात्रों, बुद्धिजीवियों को भी बड़े पैमाने पर हत्या हुई। गवर्नर द्वारा अपनी गिरफ़्तारी के फरमान के बाद माओ भूमिगत हो गये और हुनान से खुटान चले गये।

(पेज 8 पर जारी)

जनमुक्ति की अमरगाथा: चीनी क्रांति की सचित्र कथा

(पेज 7 से आगे)

6. 1928 तक कम्युनिस्ट पार्टी के 4/5 भाग को खतम कर दिया गया था। शहरों में पार्टी भूमिगत हो गई थी। लेकिन इस पराजय से एक नई क्रांतिकारी रणनीति का जन्म हुआ। पार्टी ने किसानों-मजदूरों को सशस्त्र संघर्ष के लिए संगठित करना शुरू कर दिया। 15 जुलाई, 1927 को नानचाङ में सशस्त्र विद्रोह संगठित करने की कोशिश हुई, जो असफल रही, लेकिन इस असफल विद्रोह ने चीन की इतिहास-प्रसिद्ध लाल सेना की आधारशिला रख दी। पहली बार पार्टी की अपनी स्वतंत्र सेना स्थापित हुई। अगस्त में कुओमिंताङ के प्रति ढुलमुल नीति अपनाने वाले छन तू-श्यू को नेतृत्व से हटा दिया गया। पार्टी अब नई राह पर थी।

11 दिसंबर, 1927 को पार्टी ने कैण्टन में मजदूरों और सैनिकों के एक विद्रोह का नेतृत्व किया। कैण्टन के रूप में वहां किसानों-मजदूरों की एक जनवादी सरकार कायम हुई। पर प्रतिक्रांतिकारियों के मुकाबले क्रांतिकारी अभी काफी कमजोर थे। कुओमिन्ताङ की ताकत लगभग 5 या 6 गुनी अधिक थी और उसे अमेरिकी, ब्रिटिश और जापानी गनबोटों का समर्थन भी हासिल था। नतीजतन कैण्टन कम्यून को खून में डुबो दिया गया। इस घटना से माओ ने यह सबक निकाला कि चीन में शहर प्रतिक्रांति के मजबूत गढ़ बने हैं और मजदूरों के बहादुराना संघर्षों-कुर्बानियों के बावजूद शहरों में आम बगावत की सामरिक नीति से चीनी क्रांति विजयी नहीं हो सकती। अब माओ गांवों को क्रांति का आधार बनाने की दिशा में आगे बढ़े।

सामंतों के विरुद्ध किसानों का विद्रोह (सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के दौरान निर्मित मिट्टी की आदमकद मूर्तियां)

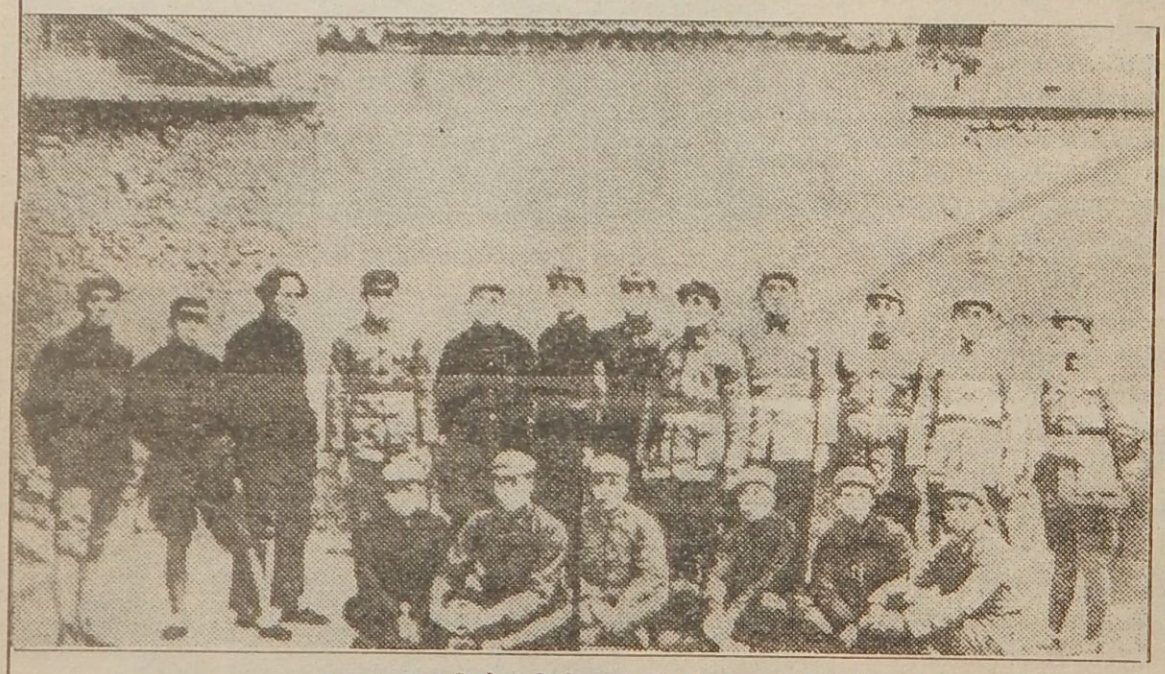

शरद फसल विद्रोह के नेता माओ त्से तुङ बायें से तीसरे

7. जमींदारों, युद्ध-सरदारों और कुओमिंताङ के भाड़े के सैनिक चारों ओर कम्युनिस्टों को ढूंढकर उनकी हत्या कर रहे थे। इस स्थिति में माओ "शरद फसल विद्रोह" के लिए खदान मजदूरों के बीच से भरती करने आनयुआन पहुंचे।

शरद ऋतु में फसल कटने के बाद जमींदार अपने दल-बल सहित पहुंचकर किसानों से मनमाना लगान वसूलते थे। माओ ने इस विद्रोह के लिए पहली मजदूर किसान क्रांतिकारी सेना का गठन किया। कुओमिंताङ के झण्डे के बजाय इस सेना ने माओ द्वारा डिजाइन किये गये नये झण्डे को अपना झण्डा बनाया जिसमें एक सितारे के भीतर हंसिया-हथौड़ा अंकित था शरद-फसल विद्रोह के दौरान इस सेना के बल पर किसानों ने जमींदारों के घर एक दाना अनाज भी नहीं पहुंचने दिया और उनकी जमीन भी जब्त कर ली। इन नई क्रांतिकारी सेना में करीब 8,000 सैनिक थे। उनकी कोई वर्दी नहीं थी। हथियार के नाम पर भाले आदि कुछ परम्परागत हथियार थे और कुछ राइफलें थीं। पर प्रतिक्रियावादी सेना से लड़ते हुए उन्होंने हुनान से कियाङसी प्रांत तक मार्च किया। यह पहला कदम था, एक नये प्रकार का क्रान्तिकारी युद्ध संगठित करने की दिशा में —जिसे माओ ने लोकयुद्ध का नाम दिया और जिसका उद्देश्य था गांवों में आधार-इलाकों की स्थापना करना, एक लाल सेना का निर्माण करना, देहातों में भूमि-क्रांति को आगे बढ़ाना तथा दीर्घकालिक युद्ध के जरिए गांवों से शहरों को घेरना और अंततोगत्वा उनपर कब्जा करना।

(अगले अंक में जारी)

पहली किसान-मजदूर सेना के साथ माओ (एक चित्र)

मजदूर नायक : क्रांतिकारी योद्धा

वर्ग-सचेत मजदूरों के बहादुर बेटे जब एक बार अपनी मुक्ति के दर्शन को पकड़ लेते हैं; जब एक बार वे सर्वहारा क्रान्ति के मार्गदर्शक सिद्धांत को पकड़ लेते हैं; तो फिर उनकी अडिग निष्ठा, शौर्य, व्यावहारिक जीवन की जमीनी समझ और सर्जनात्मकता उन्हें हमारे युग के नये नायकों के रूप में ढाल देती है। ऐसे लोग उस करोड़ों-करोड़ आम मेहनतकश जनसमुदाय के उन सभी वीरोचित उदात्त गुणों को अपने व्यक्तित्व के जरिए प्रकट करते हैं, जो इतिहास के वास्तविक निर्माता और नायक होते हैं। इसलिए ऐसे लोग क्रान्तिकारी जनता के सजीव प्रतिनिधि चरित्र और इतिहास के नायक बन जाते हैं और उनकी जीवन-गाथा एक महाकाव्यात्मक आख्यान बन जाती है।

'बिगुल' के इस अनियमित स्तम्भ में हम दुनिया की सर्वहारा क्रान्तियों की ऐसी ही कुछ हस्तियों के बारे में उन्हीं के समकालीन किसी महान क्रान्तिकारी नेता या लेखक की संस्मरणात्मक टिप्पणियां रेखाचित्र समय-समय पर अपनी टिप्पणी के साथ प्रकाशित करते रहेंगे। ये ऐसे लोगों की गाथाएं होंगी जिन्होंने शोषण-उत्पीड़न की निर्मम-अंधी दुनिया के अंधेरे से ऊपर उठकर जिन्दगी भर उस अंधेरे से लोहा लिया और क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग के प्रतिनिधि चरित्र बन गये । वे क्रान्तिकथाओं के ऐसे नायक थे, जो इतिहास-प्रसिद्ध तो नहीं थे, पर जिनकी जिन्दगी से यह शिक्षा मिलती है कि श्रम करने वाले लोग जब ज्ञान तक पहुंचते हैं और अपनी मुक्ति का मार्ग ढूंढ लेते हैं तो फिर किस तरह अडिग-अविचल रहकर वे क्रान्ति में हिस्सा लेते हैं। उनके भीतर ढुलमुलपन, कायरता, कैरियरवाद, उदारतावाद और अल्पज्ञान पर इतराने जैसे दुर्गुण नहीं होते जो मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों से आने वाले कम्युनिस्टों में क्रान्तिकारी जीवन के लम्बे समय तक बने रहते हैं और पार्टी में तमाम भटकावों को बल देने में अहम भूमिका निभाते हैं।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि भारतीय मजदूरों के बीच से भी ऐसे ही वर्ग-सचेत बहादुर सपूत आगे आयेंगे। सर्वहारा वर्ग की पार्टी के क्रान्तिकारी चरित्र के बने रहने की एक बुनियादी शर्त है कि मेहनतकशों के बीच के ऐसे सम्भावनायुक्त तत्वों की राजनीतिक शिक्षा-दीक्षा करके उन्हें निखारा-मांजा जाये और क्रान्तिकारी कतारों में भरती किया जाये।

इस बार इस स्तम्भ के अंतर्गत हम क्रांति के चितेरे, महान सर्वहारा लेखक **मक्सिम गोर्की** की एक संस्मरणात्मक कहानी **'कामो'** दे रहे हैं। यह कहानी **साइमन तर-पेत्रोसियान** नामक एक मजदूर के बारे में है जिसने क्रांति के दौरान बेजोड़ बहादुराना भूमिका निभाई थी। वह कामो के नाम से ही प्रसिद्ध था। जन्मदिन (28 मार्च) के अवसर पर इस रचना का प्रकाशन **'बिगुल'** की ओर से मेहनतकश जनता के सच्चे क्रांतिकारी लेखक गोर्की को श्रद्धांजलि भी है।

—सम्पादक

कामो

1905 के नवम्बर-दिसम्बर के महीने में मैं मोखोवाया मार्ग और वोज्दविजेन्का के नुक्कड़ पर स्थित इमारत के एक फ्लैट में रहता था। कुछ ही दिन पहले तक अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति का कार्यालय भी इसी इमारत में था। मेरे साथ उस समय बारह सशस्त्र जॉर्जियाइयों की एक टुकड़ी रहती थी। समिति के मातहत बोल्शेविक साथियों के एक दल को लियोनिद क्रासीन ने संगठित किया था। यह समिति उनकी मदद से मास्को के मजदूरों के क्रान्तिकारी कार्यकलापों को निर्देशित व संचालित की चेष्टा कर रही थी। इन साथियों की टुकड़ी विभिन्न जिलों के बीच संचार व्यवस्था को बनाये रखने की कोशिश करती थी तथा सम्मेलनों के दौरान मेरे फ्लैट (कमरे) की रखवाली भी करती थी। बहुत बार इस टुकड़ी को "यमदूतों" (ब्लैक हन्ड्रेड्स) के खिलाफ लड़ने के लिए भी जाना पड़ता था। ऐसे ही एक अवसर पर जब कि लगभग एक हजार यमदूतों की भीड़ ने प्राविधिक कालेज पर, जहां उस दरिंदे मिखालचुक द्वारा मार डाले गये साथी बाउमान का शव रखा था, धावा बोल दिया था तो तरुण जॉर्जियाईयों की अस्त्रों-शस्त्रों से अच्छी तरह लैस इस टुकड़ी ने उस भीड़ को मार भगाया था।

टुकड़ी के साथी दिनभर के काम और खतरों से थककर देर गये रात को घर लौटते थे। फिर फर्श पर लेटे-लेटे वे एक दूसरे को दिन भर के अपने अनुभव सुनाते थे। वे सब के सब 18 और 22 वर्ष तक की उम्र के नौजवान थे। उनके कमाण्डर साथी अराबिद्जे थे। साथी अराबिद्जे की आयु तीस के क़रीब हो रही थी। वह अत्यन्त कर्मठ, अत्यन्त परिश्रमी और बहादुर क्रान्तिकारी थे। अगर मैं गलती नहीं कर रहा हूं तो 1908 में जार्जिया में वहां के लोगों से बदला लेने वाली फौजी टुकड़ी के कमाण्डर जनरल अजानचीयेव-अजानचेव्स्की का गोली मारकर उन्होंने ख़ात्मा किया था।

"कामो" का नाम सबसे पहले मुझे अराबिद्जे ने ही बतलाया था। क्रान्तिकारी तरकीबों के असाधारण रूप से साहसी इस व्याख्याकार के सम्बन्ध में कुछ कहानियां भी उन्होंने मुझे बतलायी थीं।

ये कहानियां इतनी विलक्षण, अविश्वसनीय और कल्पनातीत थीं कि उन वीरतापूर्ण दिनों में भी उन पर विश्वास करना कठिन था। कोई आदमी उनकी तरह का अतिमानवीय साहस दिखाने के साथ-साथ अपने काम में निरन्तर सफल होता जा सकता था, और हृदय की शिशु-जैसी अबोधता के साथ-साथ उनके अन्दर असामान्य किस्म की ऐसी सूझ-बूझ भी हो सकती थी —इस पर विश्वास करना कठिन लगता था। उस समय मुझे लगा कि उनके बारे में जो सब चीजें मैंने सुनी थीं अगर मैं उन्हें लिख डालूंगा तो कोई विश्वास नहीं करेगा। कोई मानेगा नहीं कि वास्तव में हाड़-मांस का कोई व्यक्ति ऐसा हो सकता है। मेरे द्वारा प्रस्तुत किया गया "कामो" का चित्र एक उपन्यासकार की मात्र कल्पना समझा जायेगा। इसलिए, अराबिद्जे ने जो कुछ भी मुझे बतलाया था लगभग उस सब को मैंने अराबिद्जे का क्रान्तिकारी रूमानीपन मान लिया था।

किन्तु, जैसा कि बहुत बार होता है, असलियत किसी भी "कल्पना" से अधिक जटिल तथा विस्मयकारी साबित हुई।

बहुत दिन बीतने से पहले ही "कामो" के सम्बध में इन कहानियों की पुष्टि एन.एन.फ्लेरोव नामक एक व्यक्ति ने की जिससे मेरी मुलाक़ात बहुत पहले, 1892 में तिफलिस में हुई थी। उस समय वह, काउकाज नामक अखबार में प्रूफ-रीडर की हैसियत से काम करता था। उन दिनों वह "जनतावादी" था और जिलावतनी की मियाद पूरी करके तभी साईबेरिया से लौटा था। वह एक बहुत थका-मांदा इन्सान था, किन्तु मार्क्स का उसने गहराई से अध्ययन किया था और मुझे तथा मेरे साथी अफनासियेव को बहुत ही ओजस्विता के साथ वह यह समझाने की चेष्टा करता था कि "इतिहास हमारे पक्ष में काम कर रहा है।"

अनेक थके लोगों की तरह वह भी क्रान्ति की अपेक्षा क्रमिक विकास की प्रक्रिया को अधिक पसन्द करता था।

परन्तु 1905 में वह मास्को आ पहुंचा था और तब वह एक बिल्कुल बदला हुआ इन्सान था। सूखी खांसी खांसते हुए और उस आदमी की तरह की सावधानी भरी आवाज में जिसके फेफड़ों को तपेदिक खाये जा रहा था उसने कहा,

"अरे, इस देश में एक सामाजिक इन्कलाब का श्रीगणेश हो रहा है। क्या तुम लोग इसे समझते हो? हां, और यह इन्क़लाब सचमुच होने जा रहा है, क्योंकि इसकी शुरुआत नीचे से, धरती के अन्दर से हुई है।"

यह देखकर अच्छा लगता था कि एक संकुचित तर्कवादी की अदूरदर्शिता को उसने तिलांजलि दे दी थी। उसकी आवाज में इतना जोश सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। फिर वह बोला,

"और, देखो तो, मजदूर वर्ग के अन्दर से कैसे-कैसे विलक्षण क्रान्तिकारी पैदा हो रहे हैं! जरा इसे सुनो!"

उसने किसी एक अद्भुत व्यक्ति के सम्बन्ध में बातें बतानी शुरू कर दीं। कुछ देर सुनने के बाद मैंने पूछा, "उसका नाम क्या 'कामो' है?"

"अच्छा, तो तुम उसे जानते हो? इधर-उधर कुछ सुना होगा...।"

उसने अपने चौड़े माथे और गंजी होती जाती खोपड़ी के बचे-खुचे सफेद बालों के ऊपर हाथ फेरा, कुछ देर तक सोचता रहा, और फिर कुछ इस तरह बोलने लगा जिससे कि मुझे तेरह साल पहले के उसके तर्कवादी रूप की याद आ गयी।

"जब लोग किसी व्यक्ति के बारे में बहुत बात करते हैं तब उसका अर्थ होता है कि वह कोई असाधारण प्राणी है। और, कदाचित उसका यह भी अर्थ होता है कि 'एक गौरैया के आ जाने से ग्रीष्म ऋतु का आरम्भ नहीं हो जाता'।"

परन्तु, इस अपवाद के साथ अतीत काल को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए, उसने उन सब चीजों की पुष्टि की जो अराबिद्जे ने हमें बतलायी थीं। और फिर स्वयं अपनी तरफ से भी मुझे निम्न कहानी उसने कह सुनाई।

बाकू के रेलवे स्टेशन पर, जहां फ्लेरोव अपने किसी परिचित से मिलने गया था, एक मजदूर ने उसे बहुत जोर से धक्का दिया। फिर आहिस्ता से उसने उससे कहा,

"अब आप कृपा कर मुझे डांटिये, गालियां दीजिए!"

फ्लेरोव को लगा कि उसे डांटने और गाली देने की वास्तव में अच्छी-खासी वजह मौजूद थी। उसने उसकी इच्छा की अच्छी तरह पूर्ति की। मजदूर अपनी टोपी हाथ में लिये क्षमा याचना करने के अंदाज में उसके सामने खड़ा था और धीरे-धीरे फुसफुसाता हुआ उससे कहने लगा,

"मैं आपको जानता हूं। आपका नाम फ्लेरोव है। मेरा पीछा किया जा रहा है। जल्दी ही यहां एक दूसरा आदमी आयेगा। उसके गले पर पट्टी बंधी होगी और वह चारख़ाने का ओवरकोट पहने होगा। उससे कह दीजियेगा कि वह सुरक्षित घर अब सुरक्षित नहीं है —वहां उसे पकड़ने के लिए लोग घात लगाये बैठे हैं। उसे आप अपने साथ अपने घर ले जाइयेगा। समझ गये ना?"

उसके बाद टोपी को अपने सर पर ठीक से रखते हुए उस मजदूर ने खुद जोर-जोर से चिल्लाना शुरू कर दिया, "तुम्हारी बकवास बहुत हो चुकी! ऐसी कौन-सी मुसीबत आ गयी है? क्या मैंने तुम्हारी कोई हड्डी-पसली तोड़ दी है? – इतना हल्ला क्यों मचा रहे हो?"

फ्लेरोव हंसने लगा। फिर बोला,

"बढ़िया एक्टिंग थी ना? उसके बाद बहुत दिनों तक मैं सोचता रहा कि उसकी बातों पर मुझे शक क्यों नहीं हुआ, उसके आदेश को इतनी आसानी से क्यों मैंने मान लिया। कदाचित जिस अधिकार के साथ उसने मुझसे बात की थी उससे मैं प्रभावित हो गया था। कोई उकसाने वाला अथवा सरकारी जासूस होता तो वह मुझसे विनम्रता के साथ बात करता, उसमें इतनी हिम्मत न होती कि मुझे हुक्म दे। उसके बाद दो या तीन बार उससे फिर मेरी मुलाकात हुई थी और एक बार वह रात भर मेरे घर रहा था। उस रात हमने लम्बी बातचीत की थी। सैद्धान्तिक रूप में उसे बहुत ज्ञान नहीं है। वह इस बात को जानता है और इसके लिए बहुत शर्मिन्दा भी है, किन्तु पढ़ने और अपने को शिक्षित करने के लिए उसके पास बिल्कुल वक्त नहीं है। और, दरअसल तो, इसकी उसे जरूरत भी नहीं है। उसका अन्तरतम तक, उसकी एक-एक भावना, क्रान्तिकारी है। उसे कभी कोई डिगा नहीं सकता। क्रान्तिकारी काम करना उसके लिए उसी तरह की एक शारीरिक आवश्यकता है जिस तरह कि इन्सान के लिए हवा और रोटी की आवश्यकता होती है।"

दो साल बाद कैप्री द्वीप पर "कामो" के कार्य-कलापों की एक और झलक मुझे लियोनिद क्रासीन के द्वारा मिली थी। हम लोग भिन्न-भिन्न पुराने साथियों की याद कर रहे थे। तभी अचानक वह हल्के से हंसे और पूछने लगे, "आपको याद है कि जिस समय उस तेज-तर्रार काकेशियाई अफसर को सड़क पर आंख मारकर मैंने इशारा किया था तो आप को कितना आश्चर्य हुआ था? आपने आश्चर्य से पूछा था, कौन है वह मैंने आपको बताया था कि वह राजकुमार दादेश केलियानी, तिफलिस का मेरा एक परिचित मित्र था। याद आया? मुझे यकीन था कि आपने मेरी बात का विश्वास नहीं किया था। आपने सोचा होगा कि भला ऐसे छैल-छबीले आदमी से मेरी कैसे यारी हो सकती है। आपको शक हुआ होगा कि मैं आप को बना रहा था। वास्तव में वह 'कामो' था। अपनी भूमिका को कितनी खूबसूरती से उसने निभाया था! अब वह बर्लिन में पकड़ लिया गया है। और सम्भवत: इस बार अब वह न बच पायेगा। वह पागल हो गया है। आपसे मैं कह सकता हूं कि वह पागल-वागल कुछ नहीं है। परन्तु मुझे नहीं लगता कि इससे वह बच पायेगा। रूसी राजदूतावास चाहता है कि वह उसे सौंप दिया जाय। यदि जो-जो काम 'कामो' ने किये हैं उनके आधे-चौथाई का भी पता सैनिकों को लग जाये तो वे उसे सूली पर चढ़ा देंगे।"

'कामो' के बारे में मुझे जितनी भी जानकारी थी वह सब मैंने क्रासीन को सुना दी और उनसे पूछा कि उसमें कौन-कौन सी चीजें सत्य हैं?

क्षण भर विचार करने के बाद क्रासीन ने कहा, "यह सभी चीजें सच हो सकती हैं। मैंने भी उसकी विलक्षण सूझ-बूझ तथा हिम्मत की इन कहानियों को सुना है। निस्सन्देह, यह सम्भव है कि स्वयं अपने एक नायक की सृष्टि करने के लिए 'कामो' की अद्भुत सफलताओं तथा कारगुजारियों की कहानी को मजदूर थोड़ा-बहुत रंग-चुनकर पेश कर रहे हों, वर्ग चेतना को धार देने के लिए वे एक क्रान्तिकारी गाथा गढ़ रहे हों! परन्तु, वास्तव में, वह असाधारण तौर से एक मौलिक व्यक्ति है, नये ढंग का व्यक्ति है। कभी-कभी ऐसा लगने लगता है कि सफलता ने उसे बिगाड़ दिया है और वह थोड़ा-बहुत नाटक भी करता है। परन्तु यह केवल नौजवानी की दुस्साहसिकता, केवल दिखावा और रूमानीपन नहीं है। यह किसी और चीज से पैदा होता है। बेवकूफ की भूमिका वह बहुत संजीदगी के साथ अदा करता है, किन्तु लगता है जैसे कि उसे वह, यथार्थ की दुनिया की चिन्ता किये बिना, किसी सपने के संसार में अदा कर रहा है।

उदाहरण के लिए, इसी घटना को ले लीजिए। अपनी गिरफ्तारी से कुछ ही समय पहले बर्लिन में वह एक साथिन के साथ, एक रूसी तरुणी के साथ सड़क पर जा रहा था। तरुणी ने एक नागरिक के मकान की खिड़की पर बैठे बिल्ली के बच्चे की ओर संकेत किया और कहा, 'देखो तो, वह कितना प्यारा लग रहा है।' कामो ने एक ऊंची छलांग मारी, खिड़की पर से बिल्ली के उस बच्चे को उठा लाया और अपनी साथिन को उसे भेंट देते हुए बोला —'लो! इसे ले लो!'

"लड़की को जर्मनों के सन्देह को यह कह कर दूर करना पड़ा था कि बिल्ली का वह बच्चा खुद ही खिड़की से कूदकर उसके पास आ गया था।"..

"किन्तु इस तरह की यह कोई अकेली कहानी नहीं है। मेरा कहना यह है कि 'कामो' के अन्दर सम्पत्ति की जरा भी भावना नहीं है। उसके मुंह पर अक्सर यह बात रहती है, लीजिये, कृपया इसे स्वीकार कीजिए।'—चाहे प्रश्न स्वयं उसकी कमीज का हो, चाहे जूतों का, चाहे वैसी ही किसी दूसरी व्यक्तिगत चीज का।

"क्या ऐसा वह केवल दया भाव से करता है? नहीं। वह बहुत बढ़िया साथी है। वह मेरी और तेरी में कोई

(पेज 10 पर जारी)

कामो

(पेज 9 से आगे)

फर्क नहीं करता। वह हमेशा 'हमारे दल', 'हमारी पार्टी', 'हमारे लक्ष्य' की ही बात करता है।"

"और बर्लिन में ही एक और भी घटना घटी थी। बेहद भीड़ वाली एक गली में एक दूकानदार ने एक लड़के को अपने दरवाजे से धकिया कर बाहर कर दिया था। 'कामो' दौड़ता हुआ सीधे दुकान में घुस गया। उसका घबड़ाया हुआ साथी उसे रोक न पाया। उससे अपने को छुड़ाते हुए उसने कहा, 'जाने दो, मुझे जाने दो। उसकी थोड़ी मरम्मत करना जरूरी है।' कदाचित पागल आदमी के अपने पार्ट का वह पूर्वाभ्यास कर रहा था। किन्तु मुझे इसमें शक है। उन दिनों हम उसे अकेला बाहर नहीं जाने देते थे, क्योंकि यह निश्चित था कि अगर वह बाहर जायेगा तो किसी न किसी झंझट में जरूर फंस जायेगा।

"उसने मुझसे एक बार खुद ही यह बतलाया था कि एक बार जब वे लोग किसी को बेदखल करने गये थे और बम फेंकने की जिम्मेदारी उसके ऊपर थी तो उसे लगा था कि दो जासूस उसका पीछा कर रहे हैं। सिर्फ एक मिनट बाकी था। इसलिए वह सीधा जासूसों के सामने जा पहुंचा और उनसे उसने कहा 'यहां से भाग जाओ, मैं बम फेंकने वाला हूं।"

मैंने पूछा, 'और वे वहां से भाग गये?'

"एकदम, वे वहां से खिसक गये।"

"लेकिन तुमने उन्हें क्यों बतलाया?"

"क्यों नहीं? मैंने सोचा कि उनको बता देना ही बेहतर है, इसलिए मैंने बता दिया।"

"परन्तु, असली कारण क्या था? क्या तुम्हें उनके लिए दुःख हो रहा था?"

"इससे वह नाराज हो उठा और उसका चेहरा तमतमाने लगा। वह बोला, 'दुःखी, बिल्कुल नहीं। लेकिन, वे साधारण गरीब लोग थे। उन्हें उससे क्या लेना-देना था? उनके वहां अटके रहने की जरूरत ही क्या थी? केवल मैं ही नहीं बम फेंक रहा था। उनके चोट लग जा सकती थी, या वे मर भी सकते थे।'

"एक और घटना है जो उसके इस तरह के आचरण पर कदाचित और अधिक प्रकाश डालती है। दिदुब में एक बार उसे ऐसा लगा कि एक जासूस उसका पीछा कर रहा था। उसने उस आदमी को मजबूती से पकड़ लिया और उसे दीवाल के पास ले जाकर उससे उसने कहना शुरू कर दिया: 'तुम एक गरीब आदमी हो! हो ना? तब फिर तुम गरीबों के खिलाफ क्यों काम करते हो? क्या रईस लोग तुम्हारा साथ देते हैं? फिर तुम क्यों यह बदमाशी करते हो? चाहते हो कि मैं तुम्हारा काम तमाम कर दूं?'

"उस आदमी ने कहा कि वह मरना नहीं चाहता था। वह बातूनी के दल का एक मजदूर था। वह वहां क्रान्तिकारी साहित्य लेने के लिए आया था, किन्तु जिस साथी के साथ वह ठहरा करता था उसका पता उसने कहीं खो दिया था और इसीलिए याददाश्त के आधार पर वह उसके घर का पता लगाने की कोशिश कर रहा था। तो, देखा आपने, 'कामो' किस तरह का मौलिक इन्सान है?"

'कामो' का सबसे अद्भुत कार्य तो वह ढोंग रचना था जिससे उसने बर्लिन के उस सर्वज्ञ मनःचिकित्सक को बेवकूफ बना दिया था। किन्तु कामो की नकली बीमारी का ढोंग उसकी अधिक सहायता न कर सका। विल्हेल्म द्वितीय की सरकार ने उसे जार के हथियारबन्द सिपाहियों के हवाले कर दिया। उसे जंजीरों से बांध दिया गया और तिफलिस ले जाकर मिखाइलोव्स्की अस्पताल के मानसिक चिकित्सा विभाग में रख दिया गया। अगर मैं भूल नहीं कर रहा हूं तो उसने पागलपन का स्वांग पूरे तीन वर्ष तक किया था। अस्पताल से उसका भाग निकलना भी एक आश्चर्यजनक बहादुरी का काम था।"

व्यक्तिगत रूप से कामो से मेरी मुलाकात 1920 में, मास्को में फोरतूनतोवा के घर में हुई थी। वोज्दवीजेन्का और मोखोवाया मार्ग के कोने पर स्थित यह फ्लैट कभी मेरा रहा था।

वह एक गठे हुए शरीर का सुपुष्ट आदमी था। उसका चेहरा ठेठ काकेशियाई था और उसकी कोमल काली आंखों में नेकी और दृढ़ता का सदा चौकस रहने वाला जैसा भाव था। वह लाल सेना की वर्दी पहने था।

उसकी गतिविधियों में एक विशेष प्रकार का संयम तथा सतर्कता थी जिससे ऐसा लगता था कि उस अनभ्यस्त -वातावरण में वह कुछ परेशानी महसूस करता था। मैं तुरन्त समझ गया कि अपने क्रान्तिकारी काम के बारे में पूछे जाने वाले सवालों का जवाब देते-देते वह थक गया था और अब उसका सारा ध्यान किसी और ही चीज में केन्द्रित था। वह श्रमिक अकादमी में प्रवेश पाने के लिए जमकर पढ़ाई कर रहा था।

एक पाठ्य-पुस्तक को इस तरह सहलाते और थपथपाते हुए जैसे कि वह किसी गुस्सैल कुत्ते को पुचकार रहा हो, किंचित निराश भाव से उसने कहा, "विज्ञान को समझना कठिन काम है। इसमें जितने चित्र होने चाहिए उतने नहीं हैं। पुस्तकों में और अधिक तस्वीरें होनी चाहिए जिससे कि आदमी फौजों की स्थितियों को आसानी से समझ सके। इसके बारे में क्या आप मुझे कुछ बतला सकते हैं?"

जब मैंने कहा कि मैं नहीं बतला सकता तो मेरी बात सुनकर कामो ने किंकर्तव्य-विमूढ़ ढंग से मुस्करा दिया।

"बात यह है कि... ...।"

उसकी मुस्कराहट लगभग बच्चों जैसी, असहायतापूर्ण थी। उस तरह की असहायता की उस भावना से मैं अच्छी तरह परिचित था क्योंकि अपनी युवावस्था में, पुस्तकों के शाब्दिक ज्ञान से पाला पड़ने पर, मैं स्वयं उसका अनुभव कर चुका था। और मैं इस बात को भलीभांति समझ सकता था कि मैदान में पराक्रम दिखलाने वाले एक ऐसे निर्भीक आदमी के लिए जिसने क्रान्ति के दौरान मुख्य तौर से नये-नये अद्भुत कार्य करके उसमें योगदान किया था पुस्तकों के इस अवरोध को पार करना कितना कठिन रहा होगा।

इसकी वजह से शुरू से ही 'कामो' के प्रति मेरे अन्दर गहरे लगाव का एक भाव पैदा हो गया था और जितना ही अधिक एक दूसरे को हम जानते गये उसकी क्रान्तिकारी भावना की गहराई तथा सच्चाई से मैं उतना ही अधिक प्रभावित होता गया।

'कामो' के पौराणिक कहानी जैसे अद्भुत साहस, उसकी अतिमानवीय इच्छा-शक्ति तथा उसके आश्चर्यजनक आत्म-नियंत्रण के विषय में जिन बातों को मैं जानता था उन सबको इस आदमी के साथ, जो पाठ्य-पुस्तकों से लदी मेज के सामने इस समय मेरे करीब बैठा था, जोड़ सकना सर्वथा असम्भव-सा लगता था।

यह अविश्वसनीय लगता था कि इतने जबर्दस्त और लगातार काम के बाद भी उसका हृदय इतना कोमल और सरल बना हुआ था और उसका मन इतना जवान, निर्मल तथा मजबूत था।

उसकी तरुणाई अभी तक समाप्त नहीं हुई थी और वह एक अत्यन्त चिताकर्षक, यद्यपि चौंधियाने वाली सुन्दर नहीं, स्त्री से रूमानी ढंग से प्रेम करता था। मेरा खयाल है कि आयु में वह स्त्री 'कामो' से बड़ी थी।

अपने प्रेम के विषय में उस गीतात्मक उत्कटता के साथ वह बात करता था जिसमें कि केवल पवित्र और शक्तिवान नौजवान ही कर सकते हैं। वह कहता था:

"वह सचमुच असाधारण है! वह डाक्टर है और विज्ञान के विषय में सभी कुछ वह जानती है। काम के बाद जब वह घर वापस आती है तो मुझसे कहतीं है, 'इसमें ऐसी कौन-सी चीज है जो तुम नहीं समझ पाते? देखो, यह तो इतनी आसान है!' और उसकी बात बिल्कुल ठीक निकलती है। वह चीज बिल्कुल आसान निकलती है। वह एकदम सही सिद्ध होती है। वह भी क्या इन्सान है!"

और कभी-कभी अपनी प्रेमिका का ऐसे शब्दों में वर्णन करते-करते, जो सुनने में हास्यास्पद लगते थे, वह एक अप्रत्याशित खामोशी में डूबकर रुक जाता था, अपने घने घुंघराले बालों को पकड़कर बिखरा देता था और होंठों पर एक मौन-सा प्रश्न लिए हुए मेरी तरफ देखने लगता था।

उसे उत्साहित करता हुआ तब मैं पूछता, "हां, फिर इसके बाद क्या..?"

स्पष्ट, स्फुट स्वर में वह कहता, "देखिये, बात यह है कि...।" वह फिर चुप हो जाता और बोलने के लिए उसे तैयार करने के वास्ते मुझे फिर बहुत देर तक कोशिश करनी पड़ती और तब मुझे उसका वह अत्यन्त निश्छल प्रश्न सुनने को मिलता:

"कदाचित, मुझे शादी नहीं करनी चाहिए?"

"क्यों नहीं?"

"बात यह है कि, आप तो जानते हैं, क्रान्ति का दौर चल रहा है। मुझे बहुत पढ़ना और काम करना है। हम लोग शत्रुओं से घिरे हैं। हमें उनसे जूझना है!"

और उसकी सिकुड़ी भ्रकुटियां तथा उसकी आंखों में चमकती दृढ़ रोशनी को देखकर मैं समझ जाता कि इस प्रश्न को लेकर वास्तव में वह बहुत परेशान था। शादी करना— क्या क्रान्ति के साथ विश्वासघात करना नहीं होगा? तरुणाई-भरी उसकी शक्तिशालिता और उसके पौरुष का अम्लान तेज, उसकी जबरदस्त क्रान्तिकारी कर्म-शक्ति से मेल नहीं खा पाते थे। उस स्थिति को देखकर बहुत विचित्र, किंचित हास्यपूर्ण तक लगता था, और दिल को बहुत चोट पहुंचती थी।

जितने ही उत्साह से वह अपने प्रेम के बारे में बात करता था उतने ही उत्कट आवेग से वह देश से बाहर जाकर वहां काम करने के बारे में चर्चा करता था। एक दिन कहने लगा, "मैंने लेनिन से इजाजत मांगी है कि वह मुझे बाहर चला जाने दें। मैंने उनसे कहा है कि, 'मैं वहां उपयोगी सिद्ध होउंगा।' वह कहते हैं, 'नहीं, अब तुमको पढ़ना है!' सो, बात खत्म हो गयी है। वह सब कुछ जानते हैं! वाह, क्या आदमी हैं! बच्चे की तरह हंसते हैं। आपने कभी उन्हें हंसते सुना है?"

उसके चेहरे पर मुस्कराहट की चमक दौड़ गयी। फिर ज्योंही उसने सैन्य-विज्ञान के अध्ययन की कठिनाइयों की शिकायत करनी शुरू की त्योंही फिर उसके चेहरे पर परेशानी के बादल घिर आये।

जब मैंने उसके अतीत के बारे में पूछा तो अनिच्छा से उसने उन तमाम अद्भुत कहानियों की पुष्टि की जो मैंने उसके बारे में सुन रखी थीं। लेकिन इस सबके बारे में बात करना उसे पसन्द न था। और ऐसी कोई नयी बात उसने नहीं बतलायी जो मुझे पहले से ही नहीं मालूम थी।

एक दिन वह कहने लगा, "बहुत से मूर्खतापूर्ण कार्य भी मैंने किये हैं। एक दिन शराब पिलाकर एक पुलिस वाले को मैंने मदहोश कर दिया और फिर उसकी खोपड़ी और दाढ़ी को कोलतार से रंग दिया। हम लोग एक दूसरे से परिचित थे, सो वह मुझसे पूछने लगा, 'कल उस टोकरी में तुम क्या ले जा रहे थे?' मैंने कहा, 'अण्डे।' 'और उनके नीचे कागज कौन से थे?- 'कागज-वागज कोई नहीं थे!' वह बोला, 'तुम झूठ बोल रहे हो। कागजों को मैंने खुद देखा था!' 'तो फिर तुमने मेरी तलाशी क्यों नहीं ली?' वह बोला 'मैं उस समय स्नान करके लौट रहा था।' मूर्ख कहीं का! उसने मुझे झूठ बोलने के लिए विवश किया था इसलिए मैं उससे नाराज था। इसीलिए मैं उसे एक सराय में ले गया। शराब पीकर वह ज्योंही धुत्त हुआ, त्योंही कोलतार से मैंने उसकी अच्छी तरह पोताई कर दी। उन दिनों मैं नौजवान था, लोगों को बेवकूफ बनाने में मुझे मजा आता था।" इसके बाद उसने इस तरह मुंह बनाया, जैसे कि कोई खट्टी चीज उसके मुंह में चली गयी थी।

मैंने उसे समझाने की कोशिश की कि वह अपने संस्मरण लिख डाले। मैंने कहा कि उन तरुणों के लिए उसके संस्मरण उपयोगी होंगे जो क्रान्तिकारी तकनीकों से अनभिज्ञ हैं। उसने घुंघराले बालों वाले अपने सर को हिलाया और बहुत दिनों तक उसके लिए राजी नहीं हुआ। कहने लगा, "मैं नहीं लिख सकता। मैं जानता ही नहीं कि कैसे लिखा जाय। मेरे जैसा एक असंस्कृत आदमी भला सोचिये तो, मैं किस तरह का लेखक बनूंगा!"

किन्तु, जब वह समझ गया कि उसके संस्मरण क्रान्ति के लिए उपयोगी होंगे तब वह लिखने के लिए राजी हो गया। और फिर, हमेशा की तरह, जब एक बार उसने निर्णय कर लिया तब, निस्सन्देह, उसे पूरा करने में वह जुट गया।

उसका लिखना बहुत शुद्ध नहीं था और किसी कदर नीरस भी था। स्पष्टतया अपने से ज्यादा वह अपने साथियों के बारे में बतलाने की कोशिश करता था। इस ओर जब मैंने उसका ध्यान दिलाया तो वह नाराज होने लगा। बोला,

"क्या आप चाहते हैं कि मैं खुद अपनी ही पूजा करूं? मैं कोई पादरी नहीं हूं।"

"पादरी लोग क्या खुद अपनी पूजा करते हैं?"

"हां, और क्या? नौजवान महिलाएं खुद अपनी ही पूजा करती हैं —क्या यह सच नहीं हैं?"

लेकिन, इसके बाद, उसने अधिक सजीवता के साथ लिखना शुरू कर दिया और अपने बारे में भी लिखने में नियंत्रण को कुछ कम किया।

अपने विशिष्ट ढंग से वह सुन्दर था, यद्यपि इसका अहसास आदमी को तुरन्त नहीं होता था।

मेरे सामने लाल सेना की वर्दी पहने हुए एक मजबूत, फुर्तीला-सा व्यक्ति बैठा था; लेकिन कल्पना की आंखों से मैं देख रहा था कि उसके अन्दर एक मजदूर छिपा था, अण्डों को पहुंचाने वाला एक फेरी वाला था, एक टैक्सी ड्राइवर था, एक छैला, राजकुमार दादेश केलियानी, हथकड़ियों-बेड़ियों से जकड़ा एक पागल, एक ऐसा पगला बैठा था जिसने विज्ञान के बड़े-बड़े पंडितों को भी यह मानने के लिए मजबूर कर दिया था कि वह सचमुच पागल था!

मुझे याद नहीं कि मैंने त्रियाद्जे का क्यों जिक्र कर दिया था। त्रियाद्जे के बायें हाथ में केवल तीन अंगुलियां थीं और कैप्री में वह मेरे साथ टिका था।

'कामो' ने तुरन्त कहा, "हां-हां, मैं उसे जानता हूं —वह मेन्शेविक है!" और फिर, किंचित क्रोध और तिरस्कार से वह बोला, "इन मेन्शेविकों को मैं नहीं समझ पाता। वे ऐसे क्यों होते हैं? वे काकेशस में, हमारी ही जैसी भूमि पर रहते हैं। पर्वतमालाएं वहां भी आकाश तक ऊंची जाती हैं, नदियां सागर की ओर दौड़ती दिखलायी देती हैं, अपनी सारी सम्पदा को लिये हुए चारों तरफ वहां राजे-रजवाड़े फैले हुए हैं और आम लोग गरीब हैं। फिर भी ये मेन्शेविक इतने कमजोर क्यों होते हैं? वे क्रान्ति क्यों नहीं चाहते?"

वह बहुत देर तक विस्तार और अधिकाधिक उत्साह के साथ बात करता रहा, किन्तु एक विचार था जिसे व्यक्त करने के लिए वह सही शब्द नहीं ढूंढ पा रहा था। गहरी सांस लेते हुए उसने अपनी बात को इन शब्दों के साथ समाप्त कर दिया,

"मेहनतकश लोगों के बहुत से दुश्मन हैं। उनमें सबसे खतरनाक वे हैं जो हमारी अपनी ही भाषा में झूठ बोल सकते हैं!"

स्वभाविक तौर से मैं इस चीज को समझने के लिए बहुत उत्सुक था कि इस आदमी ने, जो इतने "निर्दोष हृदय का" है, अनुभवी मनश्चिकित्सकों को किस तरह, किस शक्ति और क्षमता से, यह समझा दिया था कि वह वास्तव में पागल है।

परन्तु, स्पष्ट था कि इस विषय में उससे किसी का पूछ-ताछ करना उसे अच्छा नहीं लगता था। उत्तर में वह कंधे उचका देता और टाल-मटोल करने की कोशिश करता। कहता,

"इसके बारे में मैं क्या कह सकता हूं? मेरे लिए वैसा करना जरूरी था! मैं अपनी चमड़ी बचा रहा था और सोचता था कि इससे क्रान्ति में सहायता मिलेगी।"...

और जब मैंने उससे कहा कि अपने जीवन के इस नाजुक समय के विषय में उसे अपने संस्मरणों में लिखना पड़ेगा और बहुत सोच-समझ कर लिखना पड़ेगा और, हो सकता है कि, इस काम में मैं उसकी कुछ सहायता कर सकूं, तभी केवल कुछ सोचता हुआ वह एकदम विचार-मग्न हो गया था। उसने अपनी आंखें बन्द कर लीं और दोनों हाथों की अंगुलियों को जोर से मोड़कर उसने उन्हें एक मुक्के की तरह बना लिया। फिर धीरे-धीरे उसने कहना शुरू किया,

"मैं कह ही क्या सकता हूं? वे मेरे शरीर को लगातार टटोलते रहते, मेरे घुटनों पर ठक-ठक करते, मुझे गुदगुदाते, और जाने किस-किस तरह से मेरी जांच करने की कोशिश करते...किन्तु अपनी अंगुलियों से वे मेरी आत्मा को तो नहीं टटोल सकते थे, टटोल सकते थे क्या? उन्होंने मुझसे कहा कि शीशे में अपना मुंह देखो और उसमें कैसा भयानक चेहरा मुझे दिखलायी दिया! वह मेरा नहीं था। वह किसी ऐसे आदमी का था जिसका चेहरा बहुत पतला था, जिसके लम्बे बाल चिकट कर सूख

(पेज 11 पर जारी)

मेहनतकशों को भी अब आखिरी विकल्प चुनना ही होगा!!

(पेज 1 से आगे)

खत्म हो जाने पर 'फायर' कर देंगे (निकाल बाहर करेंगे)। न सरकार से मंजूरी लेने का झंझट, न अदालतों का पचड़ा।

वैसे, मौजूदा कानूनों के मौजूद रहते भी पूंजी के जोर से कारखानों के मालिक मजदूरों को रोजगार सुरक्षा के प्रावधानों का लाभ उठाने से रोकने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ते थे। फिर भी अपने एकजुट संघर्षों के दम पर मजदूर एक हद तक इसका लाभ उठा लेते थे। लेकिन आज देश स्तर पर मजदूर आन्दोलन के बिखराव और टकराव का फायदा उठाकर निजी कारखानों के मालिक इन कानूनों की धज्जियां उड़ाते हुए मजदूरों पर पिल पड़े हैं और सरकार उनकी पूरी मदद कर रही है। देश में जब से निजीकरण-उदारीकरण कुचक्र शुरू हुआ है, तब से गैरकानूनी ले आफ, छंटनी-तालाबंदी की नयी-नयी घटनाएं सामने आ रही हैं। मजदूरों से बारह-बारह, चौदह-चौदह घंटे काम कराना, तरह-तरह की तिकड़में कर वेतन-मजदूरी में कटौती करना, बोनस आदि का भुगतान रोक देना आम बात बन गयी है। ठेका प्रथा का बोलबाला हो गया है। इन बदली परिस्थितियों में मौजूदा पिलपिले श्रम कानून फिर भी एक हद तक देशी-विदेशी पूंजीपतियों की खुल्लमखुल्ला लूट के रास्ते के रोड़े बने हुए थे, इसलिए "भूमण्डलीकरण की नयी जरूरतों" के मुताबिक "पुराने पड़ गये" श्रम कानूनों को बदलने के लिए वे कसमसा रहे थे।

इन्हीं नयी जरूरतों से पिछले कुछ अर्से से देशी पूंजीपतियों की प्रतिनिधि संस्थाओं-फिक्की, सी.आई.आई. एसोचैम और फण्ड बैंक डब्ल्यू.टी.ओ. की तिकड़ी से लेकर तमाम विदेशी निवेशक बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तक भारत के "कड़े" श्रम कानूनों की आलोचना करते हुए उन्हें "लचीला" बनाने की मांग करती रही हैं। अब वाजपेयी सरकार ने उनकी इस मांग को भी जल्द से जल्द पूरा करने की ठान ली है। रोजगार सुरक्षा के कानूनी प्रावधानों को पूरी तरह खत्म कर सरकार कारखाना मालिकों को मजदूरों को रखने की मजबूरी से मुक्त कर हटाने का अधिकार सौंप दे रही है।

अब रोजगार-सुरक्षा के बजाय "उत्पादकता बढ़ाना" उद्योग जगत, उनकी सेवा में साष्टांग दण्डवत कर रही सरकारों और भाड़े के बुद्धिजीवियों का सबसे लोकप्रिय आर्थिक मुहावरा बना हुआ है। इस मुहावरे का मतलब है कि मजदूर बिना चूं-चपड़ किये अपने खून के एक-एक कतरे को सिक्कों में बदलकर पूंजीपतियों की तिजोरियां भरते रहें। नये श्रम कानूनों को इस ढंग से गढ़ा जा रहा है कि उन्नत तकनोलॉजी के जरिये कम से कम संख्या में मजदूर रखकर ज्यादा से ज्यादा मुनाफा निचोड़ने के रास्ते में कोई भी अड़चन न आये। नये कानून ऐसे होंगे कि "अनुशासनहीनता और असन्तोषजनक काम" के आधार पर छंटनीशुदा मजदूरों को छंटनी मुआवजा भी न देना पड़ेगा। बोनस को उत्पादकता से जोड़ने का प्रस्ताव भी है। इसका सीधा अर्थ है कि मालिक तीन तिकड़म से घाटा दिखाकर बोनस की न्यूनतम राशि देने के बोझ से भी मुक्त हो जायें। कामों की ऐसी नयी श्रेणियां बनायी जा रही हैं जिसके तहत स्थायी श्रमिकों को तत्काल हटाकर ठेके पर मजदूर रख लिये जायें। इलेक्ट्रानिक इकाइयों के शिफ्ट शिड्यूल की अवधि को ड्योढ़ा करने का प्रस्ताव भी कानून बन जायेगा।

श्रम कानूनों में बदलाव के लिए कैबिनेट को भेजी गयी सिफारिशों में ट्रेड यूनियन ऐक्ट में जो संशोधन सुझाये गये हैं उससे यूनियनें मजदूरों के हितों के लिए लड़ने वाली संस्थाएं न होकर कारखाना मालिकों की एजेंसी बनकर रह जायेंगी। अब यूनियन बनाने के लिए न्यूनतम सात सदस्यों की जगह दस प्रतिशत मजदूरों की भागीदारी को अनिवार्य बनाया जा रहा है। यही नहीं, यूनियन में "बाहरी" व्यक्तियों के प्रवेश पर भी अंकुश लगाने की योजना है। इसके पीछे मंशा साफ है। मजदूर आन्दोलन में क्रान्तिकारी विचारों का प्रचार-प्रसार करने और आन्दोलन को मजदूर आंदोलन में क्रांतिकारी परिवर्तनों की दिशा में ले जाने की सम्भावनाओं को कुचलने की नीयत से यह किया जा रहा है। श्रमिक विवादों को हल करने के लिए अब तक चली आ रही परिपाटी—यानी यूनियनों, सरकार और प्रबंध तंत्र के बीच त्रिपक्षीय वार्ताओं के स्थान पर अब सरकार अपनी भूमिका से हाथ खींचकर द्विपक्षीय वार्ताओं का चलन लागू करने के बारे में सोच रही है। यह पद्धति लागू हो जाने के बाद श्रमिक अब प्रबंध तंत्र के रहमोकरम पर हो जाएंगे।

कैबिनेट को भेजी गयी सिफारिशों के बारे में जो खबरें पूंजीवादी अखबारों में छपी हैं, उनसे सम्भावित नये श्रम कानूनों की यही घोर मजदूर विरोधी तस्वीर सामने आती है। लेकिन सरकार मीडिया के जरिये कुछेक उन प्रावधानों को उभारने का प्रपंच कर रही है जो ऊपरी तौर पर मजदूरों के आर्थिक हित में दिखायी दे रहे हैं। जबकि औद्योगिक विवाद अधिनियम के रोजगार सुरक्षा वाले प्रावधानों पर सरकार काइयांपन के साथ लीपापोती कर रही है।

इन नये श्रम कानूनों को लागू करने के लिए आज का समय देश के शासकों के लिए बेहद अनुकूल है। आज ट्रेड यूनियन आंदोलन के गद्दार नेतृत्व की कारगुजारियों के चलते हालत इतनी बदतर हो चुकी है कि मजदूर वर्ग छोटे से छोटे आर्थिक मसलों या जनवादी हक के मसलों पर भी संघर्ष नहीं कर पा रहा है। ऐसे ही समय में सरकार एक के बाद एक मजदूर-विरोधी नीतियां लागू कर रही है। और अब बारी है कि श्रम कानूनों के सीमित जनवादी अधिकारों को भी छीन लिया जाये। पिछले नौ वर्षों से मजदूर आंदोलन के पूंजीवादी, नकली वामपंथी अर्थवादी नेतृत्व ने नयी आर्थिक नीतियों के विरोध में रस्मी उठक-बैठक और लाजबचाऊ कार्रवाईयों के सिवा कुछ नहीं किया है। यह नेतृत्व श्रम कानूनों में बदलाव के मसले पर भी ऐसा ही करेगा। जीतने के लिए संघर्ष करने की उम्मीद उससे नहीं की जा सकती और उसकी मंशा भी यह नहीं है।

श्रम कानूनों को बदलने का सरकारी फैसला यह साफ कर देता है कि आज देश की पूंजीवादी व्यवस्था ने मजदूर वर्ग को यहां तक पीछे ठेल दिया है कि वह दीवार से पीठ टिकाये खड़ा है। यह भी साफ हो चुका है कि ट्रेड यूनियन आंदोलन का मौजूदा नेतृत्व मजदूरों को आज किसी भी लड़ाई में नेतृत्व नहीं दे सकता। पचास सालों तक उसने संघर्ष की राह बताने के बजाय मजदूर वर्ग को सिर्फ याचना करना सिखाया है और कानूनी लड़ाइयों की भूलभुलैया में भटकाए रखा है।

आज यह गौरतलब बात है कि नयी आर्थिक नीतियों से बदलाव की जो प्रक्रिया घटित हो रही है उसका एक पहलू यह भी है कि अब कानूनी दायरे में लड़ाई लड़कर कुछ पाने की जमीन ही खत्म होती जा रही है। यह साफ होता जा रहा है कि मजदूर वर्ग अब आर-पार की लड़ाई लड़कर ही कुछ पा सकता है। इसलिए, आज जरूरी है कि भविष्य की इस निर्णायक लड़ाई की तैयारी के लिए मजदूर वर्ग को यह बताया जाये कि उसे अपनी लड़ाई अंत तक चलानी होगी—यानी उसे उसके ऐतिहासिक मिशन की याद दिलायी जाये। पूंजीपति वर्ग ने अपना आखिरी विकल्प चुन लिया है। अब मजदूर वर्ग के सामने भी इसके सिवाय और कोई रास्ता नहीं बचा है कि वह भी अपना आखिरी विकल्प चुन ले। ●

टेल्को में गैरकानूनी तालाबन्दी

(पेज 12 से आगे)

को नियमित वेतन देना पड़ता। इसलिए, टेल्को प्रबन्धतंत्र ने पुलिस-प्रशासन से मिलकर तालाबन्दी की यह साजिश रची। शान्तिपूर्ण कर्मचारी आन्दोलन पर पुलिस हमला करवाकर उसे एक दंगे का रूप दे दिया गया और इसके लिए कर्मचारियों को ही दोषी ठहराते हुए कारखाने में तालाबन्दी कर दी गयी।

तालाबन्दी के ठीक पहले रातों-रात सभी तैयार गाड़ियों को प्रबन्धतंत्र ने परिसर से बाहर निकाल अन्यत्र भिजवा दिया। मंदी से निपटने का निजी पूंजीपतियों का यह आजमाया हुआ तरीका है कि सरकार से हाथ मिलाकर अपने संकटों का सारा बोझ मजदूरों पर डाल दो।

मुनाफे की अन्धी हवस और पूंजीवादी उत्पादन की अराजकता से किस तरह अति उत्पादन का संकट पैदा होता है, टेल्को की तालाबन्दी की यह घटना इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है। उत्तर प्रदेश की राजधानी में स्थित टेल्को की यह इकाई देश के सबसे बड़े इजारेदार पूंजीपति घरानों में से एक टाटा घराने के लिए लम्बे अर्से से सोने की मुर्गी बनी हुई थी। यहां पर बनने वाली मोटर गाड़ियों के सभी प्रमुख कल-पुर्जे और ढांचे (बॉडी) पूना और जमशेदपुर इकाइयों से तैयार कर यहां भेजे जाते हैं। लखनऊ में सिर्फ गाड़ियों की असेम्बलिंग होती है। उत्तर प्रदेश सरकार ने टाटा के इस कारखाने को चलाने के लिए सन् 2012 तक बिक्रीकर से छूट दे रखी है। इससे टाटा को प्रति गाड़ी लगभग रु. 60,000 की बचत होती थी। एक अन्य तरीके से भी लगभग 20,000 रुपये की अतिरिक्त बचत कम्पनी को हो जाया करती थी। पूरी गाड़ी (बस व ट्रक) तैयार करने के काम में आने वाले सहायक कल-पुर्जों को खुद न बनाकर कम्पनी की यह इकाई अपने आसपास स्थित लगभग दो दर्जन अन्य लघु उद्योगों से तैयार करवाती थी। इन उद्योगों में ठेका मजदूरों से काम लिया जाता है और इनके उत्पादों पर टैक्स भी नहीं लगता। इसके साथ ही टाटा को प्रति गाड़ी रु. 20,000 की अतिरिक्त बचत का एक और जरिया था। पूना और जमशेदपुर की तुलना में यहां प्रति कर्मचारी रु. 2000 से रु. 4000 तक कम खर्च पड़ता था। इस तरह, कुल मिलाकर, लखनऊ में तैयार प्रति गाड़ी पर कम्पनी को करीब एक लाख रुपये की बचत हो जाया करती थी। इस बचत से मुनाफा कमाने की लालसा में कम्पनी ने तेज रफ्तार से उत्पादन जारी रखा। लेकिन, पिछले कुछ सालों से छायी मन्दी ने कम्पनी के सामने अति उत्पादन का संकट पैदा कर दिया। अब यही सोने की मुर्गी जी का जंजाल बन गयी, जिससे छुटकारा पाने के लिए आजमाया हुआ नुस्खा अपनाते हुए मालिकों ने कर्मचारियों की रोजी-रोटी ही छीन ली। जाहिर है कि इस तालाबन्दी से टाटा को कोई नुकसान नहीं होने वाला है। वह अपनी पूंजी निकालकर अधिक मुनाफा देने वाले किसी अन्य क्षेत्र में निवेश कर देगा।

लेकिन टेल्को के बन्द होने के बाद उसके कर्मचारियों के साथ ही उससे जुड़े बाइस लघु उद्योगों के मजदूरों को भी मालिकों ने बेकार बना दिया है, क्योंकि अब उनके मालिकों के लिए उत्पादन जारी रखने की कोई वजह नहीं है। सिर्फ यही नहीं, टेल्को कारखाना परिसर के बाहर कर्मचारियों की आम जरूरतों को पूरा करने वाला बाजार भी अब वीरान हो गया है और हजारों लोगों की रोजी-रोटी का जरिया समाप्त हो गया है।

लखनऊ का चिनहट औद्योगिक क्षेत्र अब इस कारखाने के बन्द होने से लगभग पूरी तरह उजड़ गया है। तमाम कारखाने, जिनमें अपट्रॉन की एक बड़ी इकाई भी थी, नयी आर्थिक नीतियों के पहले दौर में ही उजड़ गये थे। बचा-खुचा अब उजड़ रहा है।

फिलहाल, टेल्को कर्मचारी अपने अस्तित्व को बचाने की लड़ाई लड़ने पर मजबूर हैं। टेल्को के मजदूर साथियों का दुर्भाग्य यह है कि देशव्यापी स्तर पर मजदूर आन्दोलन आज बिखराव-ठहराव की स्थिति में पड़ा हुआ है। बिखराव का आलम यह है कि इतनी बड़ी घटना के बाद भी टेल्को की अन्य इकाइयों में कोई हलचल तक नहीं सामने आयी है। समाज के अन्य वर्गों से भी कोई कारगर सहयोग समर्थन नहीं मिल पा रहा है। ऐसे में, लखनऊ इकाई के मजदूर साथी सिर्फ अपने बूते पर संघर्ष को किसी बड़ी जीत के मुकाम तक पहुंचा सकेंगे, इसकी सम्भावना कम ही नजर आती है।

'बिगुल' के पाठक साथियों के सामने एक बार फिर हम इस सच्चाई को दुहराना गैरजरूरी नहीं समझते कि आज देशव्यापी स्तर पर इन बिखरी हुई लड़ाइयों को जब तक एक सूत्र में पिरोने की नयी शुरुआती नहीं होंगी, तब तक मजदूर वर्ग अपने-अपने कारखानों में अकेले लड़ते हुए अपना अस्तित्व भी नहीं बचा पायेगा।

यदि टेल्को के कर्मचारी अपने संघर्ष के दम पर कारखाना फिर से खुलवाने में कामयाब भी हुए तो बड़े पैमाने पर छंटनी की जायेगी। छंटनी के काम को आसान करने के लिए भारतीय जनता पार्टी की सरकार श्रम कानूनों में बदलाव की पूरी तैयारी कर चुकी है। ●

कामो

(पेज 10 से आगे)

गये थे और जिसकी आंखें जल रही थीं – वह किसी बदशकल शैतान का चेहरा था! भयानक चेहरा!

"मैंने अपनी खीसें निपोर दीं। मैं मन में सोचने लगा, हो सकता है, मैं सचमुच ही पागल हो गया हूं। वह बहुत ही कष्टदायक क्षण था! लेकिन मैंने सोच लिया था कि मुझे कौन-सा सही काम करना चाहिए और शीशे पर मैंने थूक दिया! उन दोनों ने, बदमाशों के एक गिरोह की तरह, एक दूसरे को आंख से इशारा किया। निस्संदेह, मुझे लगा कि, वह चीज उन्हें अच्छी लगी थी – यह चीज कि एक आदमी खुद अपना ही चेहरा भूल गया था!"

क्षण भर खामोश रहने के बाद उसने फिर आहिस्ता से कहना शुरू किया,

"जिस चीज के बारे में मैं सचमुच बहुत देर तक सोचता रहा था वह यह थी कि उस शख़्स के सामने मैं टिका रह सकूंगा, या वास्तव में पागल ही हो जाऊंगा? वह बहुत बुरी स्थिति थी, आप समझते हैं न? मैं खुद अपने ही ऊपर विश्वास नहीं कर पा रहा था? ऐसा लगता था कि मैं किसी पहाड़ी के ऊंचे कगार पर लटका हुआ हूं। मैं देख नहीं पा रहा था कि मैं किस चीज के सहारे लटका हुआ हूं।""

थोड़ी देर फिर चुपचाप रहने के बाद, वह मुस्कराने लगा और बोला,

"इसमें कोई शक नहीं कि वे अपने काम में माहिर हैं, अपने विज्ञान को वे जानते हैं, किन्तु वे काकेशियाई लोगों को नहीं जानते! हो सकता है कि हर काकेशियाई उनको पागल ही मालूम पड़ता हो! और फिर, यह तो बोल्शेविक भी था!! हां, इसके बारे में भी मेरे मन में विचार उठे थे। किसके मन में न उठते? मैंने मन ही मन तय किया कि चलो, खेल को चलने दो, और देखो कौन किसे पहले पागल बना देता है! मैं सफल नहीं हुआ। वे जैसे थे वैसे ही बने रहे, और मैं भी अपनी जगह पर अड़ा रहा। तिफलिस में उन्होंने मेरी अधिक जांच-पड़ताल नहीं की। मेरा ख़याल है कि उन्होंने सोचा होगा कि जर्मनों से कोई भूल नहीं हो सकती थी।"

उसने जितनी भी बातें मुझे बतलायी थीं, उनमें यह सबसे लम्बी थी।

और, ऐसा लगता था कि, इस कहानी को बतलाना उसके लिए सबसे अधिक कष्टप्रद था। अनपेक्षित रूप से कुछ मिनटों के बाद फिर वह किसी विषय के सम्बन्ध में बात करने लगा। हम लोग पास-पास बैठे थे। उसने अपने कंधे से मुझे हल्का-सा धक्का दिया और शान्त, किन्तु किंचित कठोर स्वर में बोला,

"रूसी भाषा में एक शब्द है – यारोस्त। आप इस शब्द को जानते हैं? इस यारोस्त का अर्थ क्या है – इसे मैं अभी नहीं समझ सका था। किन्तु, मेरा ख़याल है कि, जिस समय में डाक्टरों के सामने था उस समय मैं यारोस्त में ही था। आज मुझे ऐसा ही लगता है। यारोस्त – वह एक अच्छा शब्द है। क्या यह सच है कि एक रूसी देवता हुआ करता था जिसका नाम 'यारीलो' था?"

और जब उसे यह मालूम हुआ कि वास्तव में एक ऐसा देवता था और उसे सृजनात्मक शक्तियों का मूर्तमान स्वरूप माना जाता था, तो 'कामो' ठठाकर हंस पड़ा। मेरी दृष्टि में 'कामो' उन क्रान्तिकारियों में से एक था जिनके लिए वर्तमान की अपेक्षा भविष्य कहीं अधिक वास्तविक होता है। इसका अर्थ यह नहीं कि वे स्वप्न-दृष्टा होते हैं। कदापि नहीं। इसका अर्थ यह होता है कि उनके हृदय की, मन की क्रान्तिकारी भावना इतनी सामंजस्यपूर्ण और सुदृढ़ होती है कि उससे उनके विवेक को साहस मिलता है, उससे उनकी क्रान्तिकारी भावना को बढ़ने का और दूर-दूर तक छलांगें लगाने का आधार प्राप्त होता है।

अपने क्रान्तिकारी क्रियाकलापों के बाहर वह सम्पूर्ण वास्तविकता, जिसके अन्तर्गत उनके पूरे वर्ग को रहना पड़ता है, उन्हें एक दुःस्वप्न की तरह, एक भयानक मायाजाल की तरह प्रतीत होती है, और जिस असली वास्तविकता में वे जिन्दा रहते हैं वह समाजवादी भविष्य की वास्तविकता होती है।

●

साम्राज्यवादी लुटेरों के सरगना क्लिण्टन की भारत यात्रा

देशी लुटेरे लहालोट हुए, परजीवी जमातों ने आरती उतारी

भारत यात्रा-से लौटने के बाद भी साम्राज्यवादी लुटेरों का सरगना बिल क्लिण्टन भारतीय मेजबानों की आवभगत भूल नहीं पा रहा है। इन यादों की कसक महीना गुजरने के बाद भी इतनी ताजा है कि दिन में कई-कई बार इस बारे में चर्चा छेड़ देने से वह खुद को रोक नहीं पा रहा है। भला क्यों न हो ऐसा? क्लिण्टन की अगवानी में देश के हुक्मरानों ने जो पलक-पांवड़े बिछाये, सैरसपाटा कराया और भोज-भात खिलायी, उसका सुरूर ही कुछ ऐसा था कि किसी भी मेहमान को महीनों खुमारी चढ़ी रहेगी।

क्लिण्टन की भारत-यात्रा के चन्द दिनों पहले जिस सरकार ने मेहनतकश जनता को बजट की कड़वी घूंट पिलायी थी, उसने यदि साम्राज्यवादी लुटेरों के सरदार के सामने छप्पन भोग परोसा तो इसमें किसी को कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। और फिर हमारे देश में क्लिण्टन जैसों के कद्दानों की एक अच्छी-खासी फसल पिछली आधी सदी के दौरान उग चुकी है और पिछले दस सालों में तो वह काफी लहलहाने लगी है। तमाम औपचारिक-अनौपचारिक स्वागत-समारोहों में देश के भीतर की इस परजीवी जमात ने अपने ईश्वर का साक्षात् दर्शन कर स्वर्ग में जगह सुरक्षित कर ली, आमने-सामने बैठकर भोजन ग्रहण किया, विश्व शान्ति और मानवता की पीड़ा दूर करने के प्रश्नों पर आशीष-वचन सुने, हाथों की गर्मी महसूस की। कुछ ने 'जगविधाता' की पुत्री के साथ फाग खेलने का सुख भी प्राप्त किया तो इस जमात के कुछ अभागे लोग ऐसे भी थे जो सिर्फ कनखियों से निहार पाये और कुछ ने सिर्फ दूरदर्शनी पर्दे पर छवि देखकर अपना जी हल्का किया।

इस जमात में मेहनतकशों का खून चूसने वाले बड़े-छोटे पूंजीपति व्यापारी थे, उनके सेवक भूतपूर्व-वर्तमान मंत्री-सांसद-विधायक-अफसर थे, बालीवुड के सितारे थे —और थे मीडिया जगत के चारण, जिन्होंने इस 'अलौकिक नजारे' के बयान में अखबारी पन्ने रंगे, टीवं पर्दे पर उसके 'क्लिप' दिखाये।

19 मार्च से लेकर 23 मार्च तक के पांच दिनी दौरे में बिचारे संसदीय वामपन्थी अजब पेशोपेश में पड़े हुए थे। इस दौरान उन्होंने जगह-जगह साम्राज्यवाद-विरोध की नौटंकी के 'शो' आयोजित किये थे। उन्होंने संसद में क्लिंटन का आशीर्वचन भी नहीं सुना। 'ताज दर्शन' के अनमोल घड़ी में भी, जब महाशय क्लिण्टन दुनिया के उन खुशकिस्मत लोगों में शुमार हो गये जिन्होंने ताजमहल देखा है, ये लाल कलगी वाले संसदीय मुर्गे कुकड़ूकूं करने के सौभाग्य से वंचित रह गये। बिचारे करते भी क्या, दो नावों पर चलने की मजबूरी में ऐसी विडम्बनाएं पैदा ही हो जाया करती हैं! उन्हें एक तरफ विश्व पूंजीवाद को संकटों से उबारने के लिए भूमण्डलीकरण की नीतियों को लागू करने का रास्ता भी साफ करना है और दूसरी तरफ विरोध में फटी आवाज में चिल्लाना भी है। उदारीकरण-निजीकरण के विरोध में मजदूर वर्ग के संघर्षों को भटकाकर साम्राज्यवाद की सेवा भी करनी है और मजदूर वर्ग और सुधारवादी विभ्रमों में जीने वाले मध्य वर्ग के बीच अवना जनाधार बचाने के लिए साम्राज्यवाद-विरोध का बिजूखा भी खड़ा करना है। क्लिण्टन के वापस लौट जाने के बाद शायद वे अपनी तनहाइयों में हाथ मल रहे होंगे और ठंडी आहें भर रहे होंगे।

बहरहाल, क्लिण्टन के स्वागत-सत्कार की चर्चाओं के बाद अब उसकी यात्रा के मकसद और देशी हुक्मरानों के लहालोट होने की वजहों पर भी चर्चा कर ली जाये। बिल क्लिण्टन की यात्रा के आर्थिक-राजनीतिक-सामरिक उद्देश्यों और देशी हुक्मरानों की चाहतों-उम्मीदों की कामयाबियों-नाकामयाबियों का आकलन भी कर लिया जाये क्योंकि हमारे लिए इसी चीज का महत्व है।

भारत में सैर-सपाटा करने के क्लिण्टन के निजी मकसद से इतर साम्राज्यवाद विश्व के सरगना के रूप में उसका सर्वप्रमुख मकसद अपने जूनियर पार्टनर के साथ भूमण्डलीकरण की नीतियों से जुड़े विश्व व्यापार संगठन के बहुपक्षीय एवं द्विपक्षीय मसलों पर चल रही वार्ताओं को अधिक से अधिक संस्थाबद्ध रूप देना था। यानी, मेहनतकश जनता के श्रम की लूट की साझेदारी के मसले पर मोलभाव करना, सौदा-सुलुफ करना मुख्य मक़सद था। इसीलिए, उसके साथ अमेरिकी पूंजीपतियों और उनके प्रतिनिधियों का एक भारी-भरकम शिष्ट मण्डल साथ में आया था। दूसरा प्रमुख मक़सद था अपनी साम्राज्यवादी चौधराहट से जुड़े मुद्दों —जैसे सी.टी.बी.टी. आदि पर भारतीय शासकों के साथ मतभेदों को हल करने की दिशा में कुछ कदम आगे बढ़ाना। तीसरा प्रमुख मक़सद जो क्लिण्टन यात्रा के दौरान काफी छुपा हुआ था, वह था देश की मेहनतकश जनता के पूंजीवाद-साम्राज्यवाद विरोधी संघर्षों से निपटने की साझा रणनीति को संस्थाबद्ध करना। यह मक़सद अमेरिकी और भारतीय प्रतिनिधियों के "आतंकवाद के विरुद्ध मिल-जुलकर संघर्ष करने" के रूप में व्यक्त किया गया।

इसमें भी पहला मक़सद सबसे अधिक अहमियत का था। यानी — आर्थिक मसले से जुड़ी चीजें। दूसरे मक़सद —यानी राजनीतिक-सामरिक मक़सद, भूमण्डलीकरण के मौजूदा दौर में (और वस्तुतः हमेशा ही) मुख्यतः पहले मकसद से ही निर्धारित हो रहे हैं। आज दुनिया के पैमाने पर दो देशों के आपसी रिश्ते प्रमुखतः उनकी आर्थिक हैसियत —उत्पादक शक्तियों के विकास के स्तर से निर्धारित हो रहे हैं। इस नजरिये से यदि हम क्लिण्टन यात्रा के दौरान हुए समझौतों-करारों और यात्रा खत्म होने से पूर्व जारी किये गये साझा वक्तव्य को ध्यान से देखें: तो यह तस्वीर साफ हो जायेगी कि भारत-अमेरिकी सम्बन्धों के नये दौर में दोनों पक्षों ने क्या खोया है और क्या पाया है।

विश्व साम्राज्यवादी लूट-तंत्र के जूनियर पार्टनर (सिर्फ अमेरिका का नहीं) के रूप में श्रम की लूट में अपनी हिस्सेदारी तय करने के लिए भारतीय प्रतिनिधियों ने अमेरिकी आकाओं के साथ विभिन्न मसलों पर कठिन सौदेबाजी की। भारतीय शासक वर्ग इस बात को अच्छी तरह जानता है कि अपनी अर्थव्यवस्था के संकटों से भूमण्डलीकरण के मौजूदा दौर में उबरने के लिए यदि विदेशी पूंजी और तकनोलॉजी के लिए अमेरिका और साम्राज्यवादियों की संस्थाओं मुद्राकोष-विश्व बैंक-विश्व व्यापार संगठन की कड़वी शर्तों के आगे एक हद तक झुकना उसकी मजबूरी और जरूरत है, तो संकटों से ग्रस्त साम्राज्यवादी विश्व की मजबूरियां भी कम नहीं हैं। शीतयुद्धोत्तर कालीन परिस्थितियों में भी साम्राज्यवादी लुटेरों —अमेरिका, यूरोप, जापान के बीच के झगड़ों का फायदा उठाकर यथासम्भव मोलभाव में भी वह पीछे नहीं हटा है। जाहिर है, इस सौदेबाजी में पलड़ा हमेशा सीनियर पार्टनर का ही भारी रहेगा, लेकिन यह कहना गलत होगा कि भारतीय शासक वर्ग ने पूरी तरह घुटने टेक दिये। यात्रा के दौरान जो समझौते-करार-घोषणाएं हुई हैं उनसे भारतीय शासक बड़े पूंजीपति वर्ग को भी फायदे हैं, तभी उन्होंने लाल कालीन बिछाकर क्लिण्टन का स्वागत किया है। अपने इन्हीं फायदों के मद्देनजर उसने नेहरूकालीन विदेशनीति और 'राष्ट्रीय सम्प्रभुत्ता' आदि की "पुरानी अवधारणाओं" को त्यागकर "भूमण्डलीय ग्राम" का एक दोयम दर्जे का नागरिक बनने की नियति स्वीकार कर ली है।

क्लिण्टन यात्रा के दौरान 'भारत-अमेरिका वित्तीय एवं आर्थिक मंच', 'भारत-अमेरिका व्यापार कार्य समूह', 'स्वच्छ ऊर्जा और पर्यावरण के लिए कार्यदल', 'भारत-अमेरिका विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंच' का गठन देश के मेहनतकश अवाम की देशी-विदेशी लूट को संस्थाबद्ध करने के लिए किया गया है। इसके साथ ही प्रौद्योगिकी, दूरसंचार और ऊर्जा क्षेत्र में भारतीय औरअमेरिकी कम्पनियों के बीच 4.4 अरब डालर (174 अरब रुपये) के ग्यारह सीधे समझौते भी हुए हैं। इन मंचों के गठन और समझौतों आने वाले दिनों में देशी-विदेशी पूंजी की लूट से मची तबाही का कितना विकट दौर शुरू होगा, इसका अनुमान लगाना कठिन नहीं है।

साइबराबाद (हैदराबाद) के 'हाईटेक सिटी' में बिल क्लिण्टन ने सूचना-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारतीयों की उपलब्धियों के जो गुन गाये उसके पीछे छिपी मंशाओं को भी समझना कठिन नहीं है। 'रोजगार विहीन विकास' का मूलमंत्र तो यही सूचना प्रौद्योगिकी है, जिसके व्यापार से अकूत मुनाफा बटोरने की सम्भावनाएं भी पैदा हुई हैं और फालतू आबादी को रोजगार देने के झंझटों से भी मुक्ति पाने का नया हथियार मिल गया है। चन्द्रबाबू नायडू नाहक ही नहीं देशी-विदेशी पूंजीपतियों के लिए साइबर-स्टार बने हुए हैं।

इन आर्थिक मसलों के अलावा क्लिण्टन यात्रा के दौरान दक्षिण एशिया में सामरिक-रणनीतिक शक्ति-सन्तुलन से जुड़े मसलों पर (खासकर भारत-पाक रिश्तों और कश्मीर के सवाल पर) भारतीय शासक वर्ग और अमेरिकी महाप्रभुओं के बीच जो ऊपरी सामंजस्य दिखायी दिया, उसे भी समझना कठिन नहीं है। भूमण्डलीकरण की आर्थिक जरूरतों ने आज अमेरिका को मजबूर कर दिया है कि वह अपनी दक्षिण एशिया नीति में थोड़ी तब्दीली करे। दक्षिण एशिया में अमेरिकी चौकी का काम करने वाले पाकिस्तान से कुछ दूरी दिखाना और भारतीय शासक वर्गों को सुहाने वाली भाषा बोलने की मजबूरी भारत के विशाल सम्भावना सम्पन्न बाजार से पैदा हुई है। अमेरिकी-इजारेदार पूंजीपतियों के लिए पूर्वी यूरोप के बाद भारत वह सम्भावना सम्पन्न क्षेत्र बन चुका है जिसके बूते पर अपने मुनाफे पर आये संकटों को दूर करना चाहते हैं। भारतीय शासक भी इस अमेरिकी मजबूरी को भली भांति समझते हैं और दक्षिण एशिया की कूटनीति में —कश्मीर आदि के मसलों पर अमेरिकी रुख को पाकिस्तान से अपने पक्ष में करने में एक हद तक कामयाब भी हुए हैं। निश्चित तौर पर यह भारतीय शासकों की चाहतों से नहीं बल्कि अमेरिका की अपनी नयी जरूरतों से सम्भव हुआ है।

सी.टी.बी.टी. पर दस्तखत करने के सवाल को भी भारतीय शासक अपनी रणनीति के तहत टालने में फिलहाल कामयाब हुए हैं और अमेरिका भी अपनी

(पेज 2 पर जारी)

टेल्को कर्मचारियों पर बर्बर लाठीचार्ज : कारखाने में गैरकानूनी तालाबन्दी

(बिगुल संवाददाता)

लखनऊ। विगत 28 मार्च को लखनऊ में चिनहट स्थित टेल्को (टाटा इंजीनियरिंग एण्ड लोकामोटिव कम्पनी) की इकाई के कर्मचारियों पर प्रबन्धतंत्र ने सरकार से सांठ-गांठ कर बर्बर लाठीचार्ज करवाया और कर्मचारियों पर तोड़फोड़ करने एवं अराजकता फैलाने का झूठा आरोप लगाकर गैरकानूनी तालाबन्दी कर दी। इस तरह प्रबन्धतंत्र अपने मंसूबों में कामयाब हो गया है।

टेल्को की लखनऊ इकाई के कर्मचारी एक लम्बे अर्से से वेतन असमानता को दूर करने की मांग कर रहे थे। कर्मचारियों की यह मांग बेहद वाजिब थी, क्योंकि पूना, जमशेदपुर और देश के कई अन्य शहरों में स्थित टेल्को की इकाइयों के कर्मचारियों को एक ही काम के लिए बेहतर वेतनमान दिया जाता है। घटना के दिन लखनऊ इकाई के कर्मचारी प्रबन्धतंत्र से वार्ता के लिए यूनियन नेताओं के साथ प्रबन्धक के कार्यालय के सामने इकट्ठा हुए थे। पिछले ग्यारह महीनों से बातचीत को तरह-तरह के बहानों से टालने के बाद इस दिन वार्ता के लिए स्वयं प्रबन्धतंत्र ने समय दिया था।

दरअसल, वार्ता के लिए कर्मचारियों को बुलाना प्रबन्धतंत्र की एक गहरी साजिश और सोची-समझी रणनीति का अंग था। वार्ता के लिए बुलाये जाने का इन्तजार कर रहे कर्मचारियों को दोपहर लगभग दो बजे अचानक पुलिस की एक टुकड़ी आकर डराना-धमकाना शुरू करती है। इसी बीच कुछ पुलिस वाले एक कर्मचारी से सीधे उलझकर उसे पीटना शुरू कर देते हैं। इस मारपीट के बहाने उपस्थित पुलिस अधिकारी ने लाठीचार्ज का आदेश कर दिया। आदेश का इन्तजार कर रहे पुलिस वालों ने जब लाठीचार्ज शुरू किया तो कर्मचारियों ने भी जमकर प्रतिरोध किया। कर्मचारियों के इस जबर्दस्त प्रतिरोध से निबटने के लिए आनन-फानन में, पहले से तय योजना के मुताबिक, पी.ए.सी. की एक बटालियन आ धमकी। पी.ए.सी. के आते ही प्रबन्धक के कार्यालय में आग की लपटें और धुआं दिखाई देता है। जाहिर, यह भी उसी गहरी साजिश का ही एक अंग था।

प्रबन्धतंत्र द्वारा खुद की गयी आगजनी और तोड़फोड़ का दोष कर्मचारियों के मत्थे मढ़कर पी.ए.सी. ने आतंक फैलाने की नीयत से पहले कई राउण्ड अन्धाधुन्ध हवाई फायरिंग की। फिर बर्बर लाठीचार्ज का ताण्डव शुरू हुआ। टेल्को परिसर से बाहर निकलने के रास्तों की घेरेबन्दी कर परिसर के भीतर दौड़ा-दौड़ाकर वहशियाना ढंग से कर्मचारियों की पिटाई की गई। इस लाठीचार्ज में लगभग 100 कर्मचारी बुरी तरह घायल हुए, जिनमें से अनेक की हालत यह रिपोर्ट लिखे जाने तक गम्भीर बनी हुई थी। लाठीचार्ज के दौरान मची भगदड़ में एक कर्मचारी की तो रीढ़ की हड्डी तक टूट गयी है जो अस्पताल में मौत से जूझ रहा है।

कर्मचारियों पर इस बर्बर हमले के बाद करीब 40 कर्मचारियों को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया। उस दिन आतंक का आलम यह था कि अधिकांश कर्मचारी आधी रात तक आसपास के गांवों में छिपे रहे क्योंकि पुलिस सड़कों पर लगातार गश्त कर रही थी। किसी तरह गांवों-खेतों के रास्ते वे अपने घर पहुंच सके। लेकिन पुलिस घरों पर भी कर्मचारी नेताओं की धरपकड़ के नाम पर उन्हें लगातार आतंकित कर रही है। इतना ही नहीं, वक्त-बेवक्त घरों पर पहुंचकर कर्मचारियों के परिवार की औरतों तक को अपमानित किया जा रहा है।

जिस दिन मजदूरों पर यह कहर टूटा था, ठीक उसी दिन दिल्ली में "राष्ट्र के प्रति महान सेवाओं के लिए" टाटा समूह के मालिक रतन टाटा राष्ट्रपति से पद्मभूषण की उपाधि ग्रहण कर रहे थे। शायद राष्ट्र के प्रति उन्हीं सेवाओं के लिए, जैसी सेवा उन्होने टेल्को के मजदूरों की उस दिन की।

दरअसल, टेल्को के प्रबन्धतंत्र ने लखनऊ इकाई को बन्द करने का फैसला काफी पहले ही कर लिया था। विश्व व्यापी पैमाने पर भारी वाहन उद्योग में पिछले कुछ सालों आयी भारी मन्दी से हालत यहां तक पहुंच चुकी थी कि पिछले एक साल से कारखाना परिसर में सैकड़ों तैयार गाड़ियां धूल खा रही थीं। इस स्थिति में प्रबन्धतंत्र को उत्पादन स्थगित करना था। लेकिन, यदि वह अपनी ओर से ऐसा करता तो मजदूरों

(पेज 11 पर जारी)

स्वत्वाधिकारी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ।
संपादक : डा. दूधनाथ। सम्पादकीय पता : द्वारा ओ.पी. सिन्हा, 69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006, सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ।